ओ३म्

पाक्षिक
परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५४ अंक - २० महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र अक्टूबर (द्वितीय) २०१३

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

पंडित गणपति शर्मा (शास्त्रार्थ महारथी) चुरू, राजस्थान का सन्दूक

परोपकारी आश्विन शुक्ल २०७०। अक्टूबर (द्वितीय) २०१३ २

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५४ **अंक** : २०
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: आश्विन शुक्ल, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

अक्टूबर द्वितीय २०१३

अनुक्रम

१. उत्तराखण्ड में खण्ड-खण्ड हुआ पाखण्ड	सम्पादकीय	०४
२. धर्माधर्म	स्वामी विष्वङ्	०७
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०९
४. कुहकस्य स्वर विषयक महर्षि दयानन्द...	आचार्या सूर्या देवी	१६
५. कबीर	चमूपति	२२
६. स्वामी दर्शनानन्द बलिदान शताब्दी...		३०
७. जब जर्मनी ईसाई राष्ट्र है, तो क्या...	मारिया विर्थ	३२
८. गुरु का वरण	प्रो. उमाकान्त	३४
९. जिज्ञासा समाधान-४९	आचार्य सोमदेव	३६
१०. संस्था-समाचार		३८
११. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

उत्तराखण्ड में खण्ड-खण्ड हुआ पाखण्ड

संसार में घटनायें हर समय घटती रहती हैं, कोई उनको अनुभव करता है तो कोई उन्हें महत्त्व नहीं देता। जब गत दिनों केदारनाथ में बाढ़ आई जिसमें हजारों लोगों की जीवन लीला समाप्त हो गई। वह समय जीवन को बचाने का था। प्रश्न यह नहीं हम किसे बचा रहे हैं, धार्मिक दृष्टि से उसके विचार क्या हैं? वह कहाँ का निवासी है, उसकी भाषा क्या है? दु:ख के समय केवल दु:ख अनुभव किया जाता है, दु:खी की सेवा की जाती है। प्राणी जो भी हो ईश्वर की सन्तान है, उसकी रक्षा करना जो सुरक्षित हैं उनका उत्तरदायित्व है। जीवन की रक्षा करना पाखण्ड का समर्थन नहीं होता। दु:खी पीड़ित व्यक्ति को उसकी भूल बताने का यत्न करना धर्म नहीं होता।

भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों को उपदेश देकर विद्वान् बनाया और समाज में उपदेश देकर लोगों का मार्गदर्शन करने के लिये भेज दिया। उन शिष्यों में से एक शिष्य ने एक शराबी को देखा और उसे उपदेश देना प्रारम्भ कर दिया- भाई शराब पीना बुरी बात है, इससे व्यक्ति का पतन होता है, परिवार दु:खी होता है, समाज में व्यक्ति निन्दित होता है। शराबी ने शिष्य का उपदेश तो नहीं सुना परन्तु क्रोध में आकर शराब की बोतल शिष्य के सिर पर दे मारी शिष्य चीखता-चिल्लाता भगवान बुद्ध के पास पहुँचा। तब भगवान बुद्ध ने उसको सुना और उस शिष्य के साथ उस शराबी के घर चल दिये, वहाँ पहुँच कर उसे देखा, वह बेहोश पड़ा था। उसके कपड़े भी गन्दे हो गये थे, गिरने से शरीर पर चोट भी लग गई थी। भगवान बुद्ध ने उसे उठा कर बिस्तर पर लिटाया, उसकी चोट को साफ कर दवा लगाई। उसके कपड़े ठीक किये और शय्या के पास बैठकर पंखा झलने लगे। जब शराबी को होश आया, उसने किसी साधु को अपनी सेवा करते पाया तो वह बहुत लज्जित हुआ और भगवान बुद्ध से क्षमा माँगने लगा। भगवान बुद्ध ने बड़े प्रेम से उसे समझाया, वह व्यक्ति सब बुराइयों को त्याग करके उनका शिष्य बन गया। बुद्ध ने शिष्य से कहा- जिस समय जिसकी जो आवश्यकता हो, उस समय वही करना उचित है। भूखे, रोगी, उन्मत्त व्यक्ति को उपदेश की नहीं अन्न, भोजन, सेवा आदि की आवश्यकता होती है। उस समय उपदेश देना सार्थक नहीं होता। उपदेश पात्र और अवसर देखकर देना चाहिए।

मूर्ति पूजा करने वाला तो डरता है इसलिए मूर्तिपूजा करता है परन्तु मूर्ति पूजा नहीं करने वाला मूर्तिपूजा करने वाले के प्रति उग्र हो उठता है। दोनों परिस्थितियाँ अज्ञान का परिणाम है। ऋषि दयानन्द कहते हैं मूर्ति पूजा का वर्तमान प्रचलन लगभग दो हजार वर्ष पूर्व से प्रारम्भ हुआ यह ठीक है। परन्तु जड़ पूजा की मानसिकता मनुष्य में सदा पाई जाती है। नहीं तो वेद को नहीं कहना पड़ता, उस परमेश्वर की मूर्ति नहीं बनती, हमारे को भी नहीं लिखना पड़ता मूर्ति पूजा अज्ञान है। संसार में सत्य-असत्य, ज्ञान-अज्ञान, धर्म-पाखण्ड इनका अस्तित्व सदा रहा है और सदा रहेगा। मूर्ति पूजा करने वाला भी रहेगा मूर्ति को ईश्वर या जीव नहीं मानने वाला भी रहेगा। इस परिस्थिति में अधिक स्वाभाविक है मूर्ति पूजा करने वाले को हम यह मानकर चल सकते हैं कि सब ईश्वर की सत्ता स्वीकार करते हैं। ईश्वर है ऐसा मानते हैं। प्रश्न उठता है वह कैसा हो सकता है? कैसा है या कैसा माना जा सकता है? इसका उत्तर है वह दो प्रकार का हो सकता है- साकार या निराकार। सामान्य मनुष्य को साकार मानना सुविधा जनक लगता है। इसमें आप जो भी मानना चाहें परन्तु मानने से पूर्व यह समझ लेना उचित होगा कि आप उसे जड़ मानना चाहते हैं या चेतन, यदि साकार मानना आपको ठीक लगता है तो वह जड़, निर्जीव ही होगा। यदि चेतन मानेंगे तो निराकार होगा। इसलिए जो भी साकार ईश्वर को मानता है उसका ईश्वर निर्जीव, जड़ होगा। वही ईश्वर आपकी इच्छानुसार चलेगा, उठेगा, बैठेगा, सोयेगा, खायेगा, पीयेगा। क्योंकि आपने उसे बनाया है, आप जैसा चलायेंगे वह चलेगा। वह कुछ नहीं करेगा, उसकी ओर से सबकुछ आप ही करेंगे।

ईश्वर मानना हमारी विवशता है। उसे हम मानते हैं। हमारी उससे भेंट नहीं हुई, उससे साक्षात्कार नहीं हुआ। हम अपनी कल्पना से मानते हैं इसलिये सब अपनी अपनी कल्पना का ईश्वर बनाते हैं, बनाने में स्वतन्त्र हैं, आज तक केदारनाथ के शिव जी ईश्वर थे, अब मन्दिर को बाढ़ से बचाने वाली शिला भी ईश्वर हो गई, वह दिव्य शिला बन गई, उसकी भी पूजा-अर्चना-प्रार्थना प्रारम्भ हो गई। क्योंकि ईश्वर वैसा ही हो जाता है जैसा हम स्वीकार करना उचित समझते हैं। मूर्तिपूजा की मानसिकता समझने के लिए मूर्तिपूजा के समर्थन में दिये जाने वाले दो तर्कों पर आप विचार कर लें तो आप को इसकी यथार्थता सरलता से समझ में आ जायेगी। लोग कहते हैं कि मूर्तिपूजा लोग बड़ी संख्या में करते हैं, इतने सारे लोग गलत कैसे हो सकते हैं? किसी कार्य को करने वालों की संख्या निर्णायक कैसे हो सकती है? हम इस तथ्य को ऐसे समझ सकते हैं- किसी गाँव में एक हजार व्यक्ति रहते हैं, उनमें अधिकांश व्यक्ति अनपढ़ व निरक्षर हैं। यदि एक भी व्यक्ति उन एक

हजार व्यक्तियों में पढ़ा लिखा है तो आप किसे श्रेष्ठ समझेंगे? पढ़े-लिखे एक व्यक्ति को या अनपढ़ नौ सौ निन्यानवें मनुष्यों को? निश्चय ही एक हजार लोगों में एक व्यक्ति ही ठीक होगा, वही श्रेष्ठ होगा। संसार में अनपढ़, अज्ञानी लोगों की संख्या सदा ही अधिक रहेगी। पढ़े-लिखे लोगों की संख्या कम। ऐसा इसलिए होगा क्योंकि जो बात स्वाभाविक है उस की मात्रा संख्या स्वरूप सदा अधिक होगा, जिस वस्तु को बनाया जायेगा वह स्वाभाविक की अपेक्षा न्यून होगी, न्यून प्रयास करने पर अधिक न्यून होगी, कम होगी। इसी प्रकार साकार उपासना मनुष्य अज्ञानवश करता है। निराकार उपासना के लिए ज्ञान की आवश्यकता है। अज्ञान मनुष्य में स्वाभाविक है, ज्ञान प्रयत्न से प्राप्त होता है। वह केवल प्रयत्न करने वाले को ही प्राप्त होता है दूसरे को नहीं। हमारे घर में एक को पढ़ाने से सब पढ़े-लिखे नहीं बन जाते। पढ़े-लिखे माता-पिता की सन्तान पढ़ी-लिखी उत्पन्न नहीं होती। क्योंकि अज्ञान स्वाभाविक है, ज्ञान नैमित्तिक है। प्राणियों के पास स्वाभाविक ज्ञान भी है, वह मनुष्य और पशुओं में समान है, मनुष्य की श्रेष्ठता उसके नैमित्तक या अर्जित ज्ञान से है। मनुष्य की ईश्वर को साकार मानने की बुद्धि अज्ञान के परिणाम स्वरूप है, निराकार का बोध बिना शास्त्र पढ़े, बिना विद्वानों का उपदेश सुने सम्भव नहीं है। अत: जैसे समाज में अज्ञान और ज्ञान की उपस्थिति सदा रहती है उसी प्रकार ईश्वर को साकार, निराकार मानने का विचार भी सदा बना रहता है। मनुष्यों में केवल हिन्दू ही नहीं, सभी मतमतान्तर साकार की उपासना करते हैं। इस्लाम के अनुयायी जो अपने खुदा को निराकार मानते हैं वे भी कब्र को, स्थानों को, काबा के पत्थर की पूजा करते हैं, उसे पवित्र मानते हैं। यह साकार उपासना का ही प्रकार है।

एक और तर्क साकार उपासना वाले देते हैं और लगता है हम साकार उपासना छोड़कर कोई गलती या अपराध तो नहीं कर रहे हैं। वे कहते हैं क्या हमारे माता-पिता गलत थे जो वे साकार भगवान् की उपासना करते थे यदि हम निराकार की उपासना करेंगे तो अपने माता-पिता को गलत समझेंगे, यह उनका अपमान होगा, उनके प्रति अन्याय होगा। यह सोच झूठा और पाखण्ड से भरा है। माता-पिता अनपढ़ थे, आप पढ़ते हैं, क्या यह माता-पिता का अपमान है? माता-पिता पैदल चलते थे, आप हवाई जहाज में चलते हैं, क्या यह अनुचित है? आपने अपना भोजन, अपनी भाषा, अपनी वेशभूषा, अपनी जीवनधारा सब कुछ बदल दिया तब आपको नहीं लगा इससे आपके माता-पिता का, पूर्वजों का अपमान होता है तो साकार उपासना के अज्ञान को छोड़कर निराकार उपासना के ज्ञान को स्वीकार करते हैं तो अपने पूर्वजों का या अपने माता-पिता का अपमान कैसे होगा? साकार उपासना आप परम्परा से देखा-देखी करते हैं निराकार उपासना बुद्धिपूर्वक ही की जा सकती है।

इसमें किसी के अपमान का प्रश्न ही कहाँ उठता है। साकार उपासना करने वालों के मन में एक धारणा और काम करती है, सब रूप भगवान के ही हैं आप किसी भी रूप में उसकी उपासना कर सकते हैं जिन रूपों की आप ईश्वर समझ कर या ईश्वर मानकर उपासना पूजा, प्रार्थना कर रहे हैं, साकार है या निराकार है, साकार है तो जड़ है, निराकार है तो रूप कहाँ हुआ। सब रूपों में भगवान है यह बात सत्य है, वह निराकार है अत: सभी साकार वस्तुओं में व्याप्त है। यह वाक्य ठीक है वह संसार के प्रत्येक पदार्थ में है परन्तु वह पदार्थ या वस्तु भगवान नहीं। मूर्ति में भगवान है तो दीवार में झाड़ू में क्यों नहीं? जब आप मूर्ति की पूजा करते हैं तब आप वस्तु की पूजा करते हैं, उसके अन्दर विद्यमान निराकार की नहीं। आप पूजा के पदार्थ साकार के लिए लाते हैं निराकार के लिए नहीं। अत: ईश्वर की विद्यमानता को ज्ञानी हर स्थान पर अनुभव करता है। उसके लिए सभी पदार्थों में ईश्वर है यह सत्य है परन्तु हम साकार उपासना करते हुए पदार्थ का अनुभव करते हैं उसके अन्दर विद्यमान ईश्वर का नहीं।

मूर्ति पूजा या साकार उपासना का होना इसकी आवश्यकता और इसके लाभ का प्रमाण है। बिना आवश्यकता के किसी वस्तु का उपयोग नहीं किया जा सकता। जब तक किसी वस्तु या काम से लाभ न हो कोई उस ओर प्रवृत्त नहीं होता। क्या मूर्तिपूजा से कोई लाभ नहीं? यदि लाभ नहीं होता तो लाखों करोड़ों लोग मूर्तिपूजा क्यों करते और इतनी बड़ी संख्या में पण्डे-पुजारी, मौलवी, पादरी, सन्त, साधु इतने बड़े-बड़े मन्दिर, चर्च, समाधियाँ, दरगाह आदि बनाकर क्यों बैठते? यह बात सच है कि मन्दिर में जाने वाला लाभ के लिए जाता है, उसे लाभ होता होगा तो ही वह दुबारा जाता है, बार-बार जाता है। मूर्तिपूजा से लाभ होता है वह मनुष्य को मूर्ति से नहीं होता, उसकी पूजा प्रार्थना की क्रिया से होता है। मूर्ति का लाभ पुजारी को होता है। यदि मूर्ति से लाभ होता, मूर्ति लाभ पहुँचा सकती तो वह स्वयं ही क्यो बह गई? जो स्वयं बाढ़ में बह गया वह आपको क्या बचायेगा? ऐसा सदा ही होता है। मन्दिरों में बड़ी-बड़ी दुर्घटनायें घटती है, उसमें मूर्ति का कुछ भी योगदान नहीं होता। कल पाकिस्तान के चर्च में सत्तर की हत्या हो गई। किसी मूर्ति ने किसी का बचाव नहीं किया। कुछ वर्ष पूर्व जोधपुर के किले में देवी दर्शन की होड़ में तीन सौ से अधिक युवकों की मृत्यु हो गई किसी देवी ने

रक्षा नहीं की। मक्का में भगदड़ में अनेक लोग मर गये किसी ने आकर उनको नहीं बचाया। बचाने का प्रयत्न मनुष्य करता है वह कुछ सफल हो सकता है। जहाँ प्राकृतिक आपदायें आती है वहाँ कोई भगवान अपने को नहीं बचा सकता, चाहे वह पहाड़ पर हो या नीचे, समुद्र में हो या नदी किनारे। प्रश्न उठता है जब कोई भी साकार मूर्ति हमें बचा नहीं सकती, हमारी बात सुन नहीं सकती फिर भी यह प्रवाह निरन्तर बह रहा है। साकार की पूजा घटने के स्थान पर बढ़ रही है, लोग पूछते हैं ऐसा क्यों? इसका उत्तर है समाज में जब तक अज्ञान और भय है तब तक मूर्तिपूजा समाप्त नहीं हो सकती। मनुष्य मन्दिर में जाता है किसी भय से पीड़ित होकर जाता है या किसी सुख की लाभ की कामना लेकर जाता है। मनुष्य का भय मनुष्य को मन्दिर जाने के लिए प्रेरित करता है।

यह ठीक है मनुष्य भय और प्रलोभन से प्रेरित होकर मन्दिर में जाता है परन्तु पूजा कराने वाला क्यों पूजा कराता है। वह इसलिए पूजा कराता है क्योंकि उससे उसकी आजीविका चलती है। यदि मन्दिर का भगवान सुधार कर सकता तो पुजारी, मौलवी, पादरी, पुरोहित और धार्मिक लोग न बेईमान होते न दुराचारी, परन्तु इनमें अधिकांश लोग केवल स्वार्थ और उदरपूर्ति में लगे रहते हैं। बिना परिश्रम के जब धन सम्मान और भोग विलास की सामग्री मिल जाये तो ऐसा काम कौन छोड़ना चाहेगा। जब तक समाज में भय, अज्ञान रहेगा और स्वार्थी और शोषण करने वाले रहेंगे तब तक मूर्तिपूजा रहेगी। मूर्तिपूजा संसार में सबसे सुविधा जनक व्यापार है, जिस किसी ने इसका प्रारम्भ किया होगा वह संसार का सबसे बुद्धिमान व्यापारी होगा। सामान्य व्यापार में मनुष्य को पूंजी लगानी पड़ती है, सामान देना पड़ता है, अच्छे-बुरे सामान का उत्तरदायी होना पड़ता है, बेचने के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ता है फिर भी लाभ एक निश्चित सीमा तक ही हो सकता है। इसके विपरीत मूर्तिपूजा में कोई पूंजी नहीं लगानी पड़ती, बदले में देना कुछ नहीं पड़ता, आप तो आशीर्वाद भी मत दो वह तो भगवान का उत्तरदायित्व है। चढ़ावे में जो भी आयेगा वह सब मन्दिर वाले का होगा। मन्दिरों की भारी आय के कारण सरकार उन्हें अपने आधीन करती जा रही है। करोड़ों अरबों रुपये की सम्पत्ति पहले से मन्दिरों, पूजा स्थानों, चर्चों में जमा है, प्रतिदिन सम्पत्ति का प्रवाह कम होने के स्थान पर बढ़ता ही जा रहा है। भगवान् के दरबार में जाकर आपने क्या मांगा, आपको क्या मिला? इसकी जिम्मेदारी पुजारी या मन्दिर के स्वामी की नहीं है वह आपके और आपके भगवान के बीच की बात है। मन्दिर का नारियल, दरगाह की चादर और पूजा का सामान मन्दिर और दुकान के बीच कितने चक्कर लगाता है इसका कोई हिसाब नहीं रख सकता, एक शिवरात्री पर सहारनपुर जिले के एक गाँव में शिवरात्री के मेले में प्रचार के लिए जाना हुआ। वहाँ शिव जी की मूर्ति पर उस दिन दो सौ मन गुड़ का भोग लगा। पता लगा सायंकाल पुजारी और गाँव की पँचायत में विवाद हो गया, पुजारी कहता था मैं भगवान का पुजारी हूँ, गुड़ मेरा है, पँचायत कहती थी तुम अपनी मजदूरी लो, गुड़ पंचायत का है, पता नहीं शिव जी ने अपने भक्तों के विवाद का क्या फैसला किया होगा?

इस विवेचन से यह समझना सरल होगा साकार उपासना करने वालों को जब तक सही ज्ञान नहीं होगा तब तक वे उसे नहीं छोड़ सकते, यह ज्ञान बिना शास्त्र की बात बताये किसी को भी नहीं आ सकता। समाज का बड़ा वर्ग अभी वास्तविकता से परिचित नहीं है तो ऐसे लोगों के प्रतिदुर्भाव रखने या उपेक्षा करने की अपेक्षा उन्हें उचित मार्ग बताने का प्रयत्न करना चाहिए, इसमें सबसे मुख्य बात है भगवान या मनुष्य दोनों में किस को बचाना आवश्यक है प्रथम मनुष्य को, पशुओं को, प्राणियों को बचाने की आवश्यकता है फिर भगवान को बचाने की बात की जा सकती है। जब तक कोई जानता नहीं हम उसके न जानने का उसको दोषी नहीं मान सकते। अज्ञान को दूर करना ज्ञानियों का उत्तरदायित्व है। मूर्तपूजक न घृणा के पात्र हैं न उपेक्षा के, मनुष्य सब मनुष्य हैं, समाज के प्रति सबका उत्तरदायित्व है, उसे अच्छे रूप से पूर्ण करने का प्रयास करना चाहिए। वेद कहता है-

न तस्य प्रतिमा अस्ति।

उस ईश्वर की कोई तुलना नहीं है, उसका कोई रूप नहीं है।

- धर्मवीर

प्रजाजनों को उचित है कि सफल शास्त्र का प्रचार होने के लिये सब विद्याओं में कुशल और अत्यन्त ब्रह्मचर्य्य के अनुष्ठान करने वाले पुरुष को सभापति करें और वह सभापति भी परम प्रीति के साथ सकल शास्त्र का प्रचार कराता रहे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२३

धर्माधर्म

-स्वामी विष्वङ्

संसार में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है, जो सुख नहीं चाहता हो और ऐसा भी कोई व्यक्ति नहीं है, जो दु:ख ही चाहता हो। हाँ ऐसा तो हो सकता है कि व्यक्ति काल विशेष में, परिस्थिति विशेष में सुख नहीं चाहता और दु:ख चाहता हो। परन्तु सुख न चाहने के पीछे, उस सुख से भी बड़े सुख की चाह उस व्यक्ति में अवश्य होगी। इसी प्रकार दु:ख चाहने के पीछे भी बड़े दु:ख से छुटकारा पाने के लिए छोटे दु:ख की चाह अवश्य होगी। इसलिए व्यक्ति की मूल भावना यह ही रहती है कि दु:ख कभी भी नहीं चाहता और सुख सदा चाहता है। व्यक्ति सुख को पाने के लिए और दु:ख को दूर करने के लिए कुछ भी कर सकता है और कर भी रहा है। व्यक्ति जो कुछ भी कर सकता है या कर रहा है, उसे कर्म कहते हैं। कर्म से ही सुख पाता है, कर्म से ही दु:ख पाता है और कर्म से ही सुख से वंचित रहता है, कर्म से ही दु:ख को दूर कर लेता है। व्यक्ति संसार में रहता है, तो संसार के साथ व्यक्ति का सम्बन्ध है। इसलिए व्यक्ति एकान्त में रह कर या समुदाय विशेष में रह कर सदा- हमेशा दु:ख को दूर कर नहीं सकता और सुख प्राप्त नहीं कर सकता। इसके लिए व्यक्ति को एकान्त से और समुदाय विशेष से ऊपर उठकर संसार भर को ध्यान में रखते हुए कर्म करना होगा। जिससे हमेशा सुख को प्राप्त कर सके और दु:ख को दूर कर सके।

व्यक्ति ऐसे-ऐसे कर्म करें, जिन कर्मों को संसार भर के लोग अच्छा कहें, उचित कहें, सत्य कहें, न्याय कहें, पुण्य कहें और ऐसे-ऐसे कर्म न करें, जिन कर्मों को बुरा कहें, अनुचित कहें, असत्य कहें, अन्याय कहें, पाप कहें। यह जो अच्छा, उचित, सत्य, न्याय व पुण्य है, इसे धर्म कहते हैं और जो बुरा, अनुचित, असत्य, अन्याय, पाप है, उसे अधर्म कहते हैं। इसी धर्म से व्यक्ति को सुख प्राप्त होता है और इसी अधर्म से व्यक्ति को दु:ख प्राप्त होता है। इस बात को सभी महापुरुष स्वीकार करते हैं। इसीलिए महर्षि वेद व्यास ने योगशास्त्र की व्याख्या करते हुए लिखा है कि **'धर्मात् सुखमधर्मात् दु:खम्'** (योग. ४.११ व्यासभाष्य) परन्तु आज के समाज में लोग इस बात को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। क्योंकि उन्हें यह दिखाई दे रहा है कि अधर्म करके लोग सुखी हो रहे हैं और जो लोग धर्म करने में लगे हुए हैं, वे दु:खी हो रहे हैं। इसलिए जिसे भी देखो, वह अधर्म करके सुखी होने की चेष्टा कर रहा है और जो धर्म करने वाले हैं, वे अधर्म करने वालों को देख-देख कर स्वयं भी धीरे-धीरे अधर्म की ओर झुकते जा रहे हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं, जो धर्म में बहुत श्रद्धा-विश्वास रखते हैं। परन्तु कभी-कभी उनमें भी संशय होता रहता है कि क्या वास्तव में अधर्म से सुख भी मिलता है?

संसार में कुछ ऐसे भी लोग हैं कि अधर्म से ठोकर खा-खा कर धर्म की ओर झुक जाते हैं और धर्म करने लगते हैं। धर्म करते-करते बहुत सारी समस्याएँ सामने आ खड़ी होती हैं और उन समस्याओं से घबरा कर फिर अधर्म की ओर हाथ बढ़ाना चाहते हैं। इस प्रकार की द्विविधाओं में फंस कर टूट जाते हैं। साधारण जनता में सदा संशय बना रहता है कि कभी धर्म को अच्छा मानना कभी अधर्म को अच्छा मानना। यहाँ पर यह विचारना अत्यन्त आवश्यक है कि धर्म से सुख का मिलना और अधर्म से दु:ख का मिलना स्वीकार किया जाता है या नहीं? हाँ प्रत्येक व्यक्ति यह तो स्वीकार करता है कि धर्म से सुख मिलता है, परन्तु हमेशा ही सुख मिलता है, यह स्वीकार नहीं कर पा रहा है। इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति यह तो स्वीकार करता है कि अधर्म से दु:ख मिलता है परन्तु हमेशा ही दु:ख मिलता है, यह स्वीकार नहीं कर पा रहा है। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि धर्म से सुख, अधर्म से दु:ख, तो स्वीकार किया जा रहा है। परन्तु जहाँ-जहाँ धर्म से सुख नहीं मिलता वहाँ-वहाँ धर्म के कारण नहीं मिल रहा है या अन्यों के अधर्म के कारण सुख में रुकावट हुई। इसी प्रकार जहाँ-जहाँ अधर्म से दुख नहीं मिलता वहाँ-वहाँ अधर्म के कारण नहीं मिल रहा है या स्वयं के भिन्न धर्मों व अन्यों के धर्म के कारण दु:ख में रुकावट हुई, इन बिन्दुओं पर विचार किये बिना वास्तविकता का बोध नहीं हो पायेगा।

प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वीकार करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति कर्म करने में स्वतन्त्र होता है। स्वतन्त्र व्यक्ति अपनी स्वतन्त्रता से अन्यों को सुख भी दे सकता है और दु:ख भी दे सकता है। अन्यों के द्वारा किये जाने वाले कर्मों से हमें सुख व दु:ख मिलता है, तो वह सुख व दु:ख हमारे लिए परिणाम और प्रभाव, तो हो सकते हैं। परन्तु हमारे कर्मों का फल नहीं हैं। व्यक्ति को यह भी समझ लेना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति शत-प्रतिशत अधर्म नहीं कर सकता। यदि ऐसा कोई ठान कर चले कि मैं शत-

प्रतिशत अधर्म ही करूँगा, तो जीवित नहीं रह सकता। इसलिए व्यक्ति न चाहते हुए भी धर्म करता है। अधर्म करने वाले एक ओर अधर्म करते हुए दूसरी ओर माता-पिता, पति-पत्नी, सन्तान, सम्बन्धी, मित्र आदि के साथ धर्म भी कर रहे होते हैं। यहाँ पर यह समझना अत्यन्त आवश्यक है कि अधर्म करने वाले, जो सुखी दिखाई दे रहे होते हैं। वह सुख अधर्म के कारण न हो कर धर्म के कारण होता है।

अधर्म से पैसा, मकान, जमीन, वस्त्र, गाडियाँ इत्यादि अनेकों भौतिक साधनों को, तो प्राप्त किया जाता है। परन्तु भौतिक साधनों को प्राप्त करना एक अलग विषय है और उन साधनों से सुख प्राप्त करना दूसरा विषय है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति अधर्म करके एक लाख रुपये लाया। उन पैसों में से दस हजार खर्च करके कुछ लोगों को प्रीतिभोज खिला रहा है। यहाँ पर अधर्म से पैसे लाना एक कर्म है और कुछ लोगों को प्रीतिभोज खिलाना दूसरा कर्म है और वह धर्म है। लोगों को खिलाता हुआ सुखी दिखाई दे रहा है, परन्तु अधर्म करके जो पैसे लाया है, उसके कारण अन्दर ही अन्दर भय, शंका, अशान्ति से जो दु:ख उसे हो रहा है कि कोई मुझे पकड़ न ले, किसी को पता न चले आदि-आदि से जो कष्ट भोग रहा है यह दु:ख अन्यों को दिखाई नहीं दे रहा है। इसलिए लोग यह ही समझ रहे हैं कि अधर्म से सुखी है, परन्तु यहाँ अधर्म से जो दु:ख उसे झेलना पड़ रहा है, वह फल लम्बे काल तक रहने वाला है क्योंकि उसका फल अवश्य ही मिलेगा, चाहे मनुष्य दे या ईश्वर दे और वह फल दु:ख रूप ही होगा। और अन्यों को प्रीतिभोज खिलाते हुए जो सुखी दिखाई दे रहा था, वह तात्कालिक है।

यहाँ पर यह समझना चाहिए कि जो लोग अधर्म से अनेकों भौतिक साधनों से युक्त रहते हैं, वे बहुत कम सुखी होते हैं और जो सुखी होते हैं, उसका कारण उनका अधर्म न हो कर उनका धर्म होता है। क्योंकि वे अधर्म के साथ-साथ धर्म भी कर रहे होते हैं। उनके धर्म ही उनको सुखी बनाने का कारण है, अधर्म कभी नहीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि जो अधर्म करने वाले सुखी दिखाई देते हैं, उनके पीछे उनका धर्म कारण बन रहा है, ऐसा समझना चाहिए। और जो लोग धर्म करने वाले दु:खी दिखाई देते हैं, उनके पीछे उनका अधर्म और अन्यों का अधर्म कारण बन रहा है, ऐसा समझना चाहिए। क्योंकि यदि अन्यों का अधर्म होगा, तो उनका परिणाम व प्रभाव होगा और वह तात्कालिक होगा। उस धर्म का फल तो लम्बे काल तक रहने वाला है और जब मिलेगा तब सुख ही मिलेगा। दु:ख कभी नहीं।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

प्रतिक्रिया

१. आदरणीय मन्त्री जी, परोपकारिणी सभा, की सेवा में सादर नमस्ते। निवेदन है कि परोपकारी, नियमित रूप से पढ़ने को उपलब्ध हो रहा है। इसके सभी लेख, महत्त्वपूर्ण एवं पठनीय होते हैं, जिनमें से सम्पादकीय एवं कुछ तड़प-कुछ झड़प पढ़ने की तीव्र उत्कण्ठा बनी रहती है।

सम्पादकीय में मान्य डॉ. धर्मवीर जी, कुछ ऐसे मूलभूत विषयों पर तथ्यपूर्ण एवं सटीक विवेचन करने में सक्षम एवं सिद्ध हस्त हैं कि जिसमें विषय वस्तु का वास्तविक स्वरूप प्रकट होकर सामने आ जाता है।

परोपकारी, सितम्बर प्रथम २०१३ के सम्पादकीय में प्रो. धर्मवीर जी ने, स्वामी अग्निवेश जी के धर्मनिर्पेक्ष-वेश की कलई खोलकर, उनके छद्म वेशीय स्वरूप को, बे नकाब कर जनता के सामने प्रदर्शित कर दिया है। जो उनके कार्य कलापों का स्वच्छ आइना है।

इस गहन गंभीर विषयक विद्वतापूर्ण लेख एवं विवेचन के लिए हार्दिक बधाई एवं धन्यवाद। शुभकामनाओं सहित सेवा में प्रेषित।

शिवप्रसाद आर्य, मु. विजली खेरा, सी.ए.औ. बंगला के सामने, बांदा, उ.प्र.

२. सम्पादक प्रो. धर्मवीर जी, परोपकारी, विषय- परोपकारी अगस्त द्वितीय २०१३ में छपे डॉ. नेमीचन्द का लेख सम्बन्धी 'बेकसुर प्राणियों के खून में सने हमारे ये बर्बर शोक' सचमुच यह घिनौने शौक किस हद तक खतरनाक है, इस पाठ से हजारों लाखों पाठकों तक यह सन्देश आपने पहुँचाया यह सराहनीय है।

आज बेजुबान जानवर, पशु, पक्षी, कीट किस खुदा के पास जायें, आज अमीर लोग दौलत के दम पर कुछ भी करना पसन्द कर रहे हैं। हाथी दांत के लिए हाथी को मारना, खाल के लिए शेर और चीते को मारना, सांप को मारना पसन्द कर रहे हैं। पंखों के लिए पशु-पक्षी की हत्या हो रही है। ऐसे चलते एक दिन सब नष्ट हो जायेगा और इंसान सब खो बैठेगा।

शेख अब्दुल सलाम, रेशम अनुसन्धान विस्तार केन्द्र, मराठवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, जि. परभणी, महाराष्ट्र-४३१४०१

कुछ तड़प-कुछ झड़प

- राजेन्द्र जिज्ञासु

ऋषि के जीवन चरित्र के लिए अपूर्व अग्नि-परीक्षाः- ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों की रक्षा तथा उनके मिशन की सेवा करते हुए हमारे पूर्वजों को समय-समय पर अग्नि-परीक्षा देने का गौरव प्राप्त हुआ। साधु महात्माओं, उपदेशकों, भजनोपदेशकों, युवकों, वृद्धों, कुमारों तथा निर्भीक नेताओं ने अग्नि परीक्षा देकर एक स्वर्णिम इतिहास बनाया। कौन किस पद पर था? किसने क्या-क्या लिखा? कौन कब जन्मा और कब चल बसा? ये बातें तो हमारे खोजी लिखते रहते हैं परन्तु ऋषि भक्तों ने, ग्रामीण भजनोपदेशकों, शास्त्रार्थ महारथियों, तपस्वी साधुओं व समाज सेवकों ने किस-किस प्रकार के कष्ट झेले अब उसकी चर्चा व खोज बहुत कम लोग करते हैं। इस कारण अग्नि मन्द हुई और संघर्ष की ऊर्जा नहीं रही।

कभी आर्यसमाज में स्वामी श्रद्धानन्द जी, महात्मा नारायण स्वामी जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, पं. विष्णुदत्त जी इतिहासकार की लेखमालाओं की लोकप्रियता को सारा आर्य जगत जानता था। इस विषय को यहाँ क्यों उठाया गया है? प्राचार्य रमेशचन्द्र जीवन जी को निकट से जानने वाले यह जानते हैं कि आपने पं. चमूपति जी के साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया है। बाल्यकाल से ही पण्डित जी के पद्य गुनगुनाने में उन्हें बड़ा आनन्द आता था। उन्हें दबाव देकर कहा है कि पण्डित जी लिखित Glimpses of Swami Dayanand अंग्रेजी पुस्तक का सम्पादन करके इसका उत्तम संस्करण तैयार करें। सम्पादकीय में तथा पाद टिप्पणियों में ऋषि जीवन की घटनाओं पर पण्डित जी ने कहाँ-कहाँ क्या-क्या लिखा है, उनका हृदय स्पर्शी मौलिक चिन्तन दिया जाये। पण्डित चमूपति जी ने ऋषि-दर्शन आदि लघु पुस्तकों, प्रकाश में छपे लेखों तथा 'दयानन्द आनन्द सागर' में यत्र तत्र अपनी अनूठी शैली में ऐसे-ऐसे विचार दिये हैं जो कोई दूसरा लेखक नहीं दे सका।

जीवन जी ने यह सुझाव तो स्वीकार कर लिया साथ ही एक सहयोग माँगा। आज देश-विदेश में मूर्धन्य विधर्मी लेखकों के साहित्य पर हमारे पुराने तीन विचारकों के साहित्य की स्पष्ट छाप मिलती है- पं. लेखराम जी, स्वामी दर्शनानन्द जी तथा पं. चमूपति जी की लेखनी का जादू सिर चढ़कर बोल रहा है। जीवन जी ने कहा है कि ऐसे शीर्षस्थ साहित्यकारों के कुछ ऐसे उद्धरण उन्हें यदि संग्रहीत करके दिये जावें तो सम्पादकीय ठोस बन जावेगा। यह दायित्व हमने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

श्रद्धेय लक्ष्मण जी के ग्रन्थ का सम्पादन करते हुए श्री जितेन्द्र कुमार जी गुप्त की प्रेरणा से हमने पण्डित जी के कई अवतरण, विचार व पद्य यत्र-तत्र दिये हैं।

ऋषि के मिशन के लिए बहुतों ने बहुत दुःख कष्ट झेले **परन्तु महर्षि के जीवन चरित्र के लिए अग्नि-परीक्षा तो केवल पं. चमूपति जी को देने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। ऋषि-जीवन पर लिखने वाले कितने लेखकों ने वर्तमान काल में अपने ग्रन्थों में इस तथ्य का उल्लेख किया है कि ऋषि के जीवन चरित्र के लिए पं. चमूपति जी ने घर-बार, परिवार, सगे-सम्बन्धियों का प्यार व सम्पदा का मोह तक वार दिया।** क्या यह कोई छोटी कुर्बानी है? साधु ट.ल. वासवानी जी ने तो Glimpses of Dayanand पुस्तक की भूमिका में इसका हृदय स्पर्शी उल्लेख किया है। ब्लैवेट्स्की तथा ऐनी बेसेंट के नामों की News Value (समाचार-मूल्य) व महत्त्व हम भी जानते हैं परन्तु भारतीयों की हीन मनोवृत्ति ने अपनों का पं. चमूपति का महत्त्व बताया कब?

हम जीवन की सन्ध्या वेला में आर्यसमाज की अगली पीढ़ी के समर्पित मेधावी युवकों तथा भजनोपदेशकों से यह माँग करते हैं कि वे आर्य जाति के बच्चे-बच्चे के मन और मस्तिष्क में यह बिठा दें कि ऋषि-जीवन चरित्र के लिए बलिदान देने वाले इकलौते लेखक आचार्य चमूपति जी थे। वे तो इसके लिए काल कोठरी की यातनायें भी सहने को सहर्ष तैयार थे। फाँसी दण्ड तक पाने को तैयार थे। अपने विरुद्ध विषैला वातावरण पाकर वे घबराये नहीं, लड़खड़ाये नहीं और डगमगाये नहीं। स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा महाशय कृष्ण जी उन्हें मुस्लिम स्टेट बहावलपुर से पंजाब में खींच लाये। पण्डित जी की ऋषि भक्ति, शूरता तथा त्याग को भुला देना बहुत बड़ी कृतघ्नता है।

एक कृपालु से बातचीतः- एक प्रसिद्ध साहित्यकार तथा विद्वान् दो आर्य लेखकों को बड़े ध्यान से पढ़ते हैं। वह सज्जन पैदा तो हिन्दू परिवार में ही हुए परन्तु अपनों की निन्दा व विरोध में उन्हें आनन्द की प्राप्ति होती रही। वह परकीय लोगों की निष्काम सेवा करते रहे। वे लोग भी उन्हें बाँस पर चढ़ाये रखते रहे। यह सज्जन डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी (मनुस्मृति वाले) को तथ राजेन्द्र 'जिज्ञासु' को ध्यान से पढ़ते हैं। हमारे लेखों का प्रतिवाद भी नहीं करते। यहाँ उनका नामोल्लेख नहीं करेंगे। प्रभु करे कि उनको

पूरा-पूरा सन्मार्ग-दर्शन हो जावे।

कुछ दिन पूर्व आपने दूरभाष पर हमसे बात की। हमें उनसे संवाद करके बड़ा हर्ष हुआ। आपने हमारी पुस्तक 'कुरान सत्यार्थप्रकाश के आलोक में' कहीं से मँगवा कर पढ़ी। पुस्तक को एक सिरे से दूसरे सिरे तक मनोयोग से पढ़ा। पुस्तक उनको कैसी लगी और उन पर इसका क्या प्रभाव पड़ा? यह उनके इस मनोभावों से पता चलता है:- ''आप एक ऐसा ही ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के तेहरवें समुल्लास पर लिख दें।'' अपने कृपालु सत्यार्थ प्रेमी इस नये विद्वान् भाई का हम किन शब्दों में स्वागत करें?

हमने तत्काल उनकी चाहना व प्रेरणा को स्वीकार किया। पं. चमूपति जी के नये शब्द हमारे अधरों पर उतर आये-

''इस प्यार पे वारी, मैं मीत पे वारी,
दिलजीत पे वारी, इस रीत (रीति) पे वारी।''

हम समझते हैं कि उन्होंने इस भावना को व्यक्त कर हमारे उन सब पूर्वजों को सम्मान किया है जिन्होंने इस विनीत का निर्माण किया है। हमने इस पुस्तक का लेखन बन्धुवर सत्येन्द्र सिंह जी आर्य की प्रेरणा से किया था। पुस्तक छपने से पूर्व ही मित्रों से कह दिया था कि 'चौदहवीं का चाँद', 'इस्लाम के दीपक' और हमारी यह कृति आने वाले समय में अपने विषय की बेजोड़ पुस्तकें मानी जावेंगी। आर्यसमाज में हमारी पुस्तक का प्रसार व माँग अच्छी रही परन्तु किसी विद्वान् ने खुलकर किसी पत्र में इस पर कभी कुछ नहीं लिखा। मिलने पर तो बहुतों ने बहुत-बहुत बधाईयाँ दीं। हमारी इस पुस्तक की विशेषता यह है कि चौदहवें समुल्लास में महर्षि द्वारा उठाये गये एक-एक बिन्दु पर देश-विदेश के मुसलमानों के ग्रन्थों के उद्धरण देकर महर्षि की एक-एक समीक्षा की पुष्टि की है। अपनी शैली की यह पहली पुस्तक है। इससे पता चलता है कि सत्यार्थप्रकाश ने इस्लाम को सर्वाधिक लाभान्वित किया है। भले ही वे अपनी राजनीति अथवा स्वभाव दोष से इस ग्रन्थ को कोसते रहें।

श्री हरिकृष्ण जी की शंकायें:- पिम्परी पूना आर्यसमाज के हमारे पुराने कृपालु अभिन्न हृदय मित्र श्री हरिकृष्ण जी ने कुछ लेखकों, वक्ताओं व विद्वानों के पास कुछ शंकायें भेजी हैं। जब कहीं से किसी ने उनके प्रश्नों का उत्तर न दिया तो परोपकारी में समाधान के लिए भेज दीं। श्री हरिकृष्ण जी पुरानी पीढ़ी के आर्यों के सदृश अत्यन्त स्वाध्यायशील विद्वान् ऋषि भक्त हैं। आपकी एक अनूठी कृति (ईसाई मत विषयक) कुछ ही सप्ताह में उपलब्ध होगी। उसका प्राक्कथन हमी ने लिखा है। उसे पढ़कर आर्य जनता को आपकी विद्वत्ता का पता चलेगा।

श्री आचार्य सोमदेव जी ने सूचना दी है कि आपका एक प्रश्न ऋषि जीवन की एक घटना के सम्बन्ध में है। ऋषि से एक से अधिक बार मुसलमानों ने 'दासी पुत्र' शब्दों के बारे में आपत्ति की। महर्षि का उत्तर था, यह तो तुम्हारे कुरान में आता है। अपने ब्रह्मचारी को कहा, लाओ! कुरान इन्हें प्रमाण दिखायें।

हरिकृष्ण जी की शंका यह है कि मुझे कुरान में यह प्रसंग नहीं मिला। इस समय ऋषि जीवन पर ही हमारा ध्यान व शक्ति केन्द्रित है। मुसलमान एक नहीं सत्यार्थप्रकाश में वर्णित इस्लाम सम्बन्धी और भी कई बातों के लिये यह कहते रहे हैं कि यह कुरान में कहीं नहीं लिखा यथा अल्लाह की ऊंटनी तथा मधु सेवन की कहानी। दिल्ली में चलाये गये अभियोग में भी मधु सेवन की समीक्षा को लेकर यही कहा गया। ऐसी सब आपत्तियों के प्रमाण कुरान से हमने अपनी पुस्तक में उद्धृत कर दिये हैं।

कुरान का एक ही संस्करण तो नहीं। आयत में कही गई बातों की टिप्पणियों में, पोट में दिये शाह अब्दुल कादिर जी के 'फायदों' तथा भिन्न-भिन्न तफ़सीरों में भी व्याख्या की गई है। शाह जी के 'फायदे' कुरान की पोट में- कुरान का भाग हैं। हज़रत हाजरा तथा इस्माईल की कहानी के बारे में अनवर शेख जी आदि सब मान्य लेखकों ने लिखा है। हरिकृष्ण जी कुछ प्रतिक्षा करें। आगे चलकर सप्रमाण इस पर प्रकाश डाला जावेगा। मुसलमान लेखकों ने मताँधता से कई पुस्तकों में 'दासी पुत्र' शब्दों को लेकर अपने धर्मबन्धुओं को भड़काया तो बहुत परन्तु **इस कथन को झुठला कोई नहीं सका।** ऐसी कई पुस्तकों का नाम यहाँ लिया जा सकता है। 'सत्यार्थ भास्कर' में स्वामी विद्यानन्द जी ने भी इस कहानी पर कुछ लिखा है। मुंशी इन्द्रमणि जी, पं. लेखराम जी के साहित्य में ये सब प्रमाण हैं परन्तु शास्त्र चर्चा, शंका समाधान घटने से प्रमाण उपस्थित नहीं होते। ऐसे प्रमाण देखकर बताये जा सकते हैं। मौलाना नदवी जी के कई खण्डों में छपे ग्रन्थ में भी यह प्रमाण अवश्य मिलेगा।

राजनीति का सच और देश की दुर्दशा:- किसी उर्दू कवि ने कभी लिखा था कि

सच कहना हमाकत है और झूठ खिरदमंदी,
इक बाग में इक कुमरी गाती यह तराना थी।

अर्थात् एक वाटिका में एक कोकिला यह गीत गा रही थी कि सत्य कहना तो आज मूर्खता है और झूठ बोलना बद्धिमत्ता है। भारतीय राजनीति का सच्च भी आज यही है कि सच्च कहना मूर्खता है। हिन्दू तो अंध विश्वासों के शिकार हैं और हिन्दू हितों का रोना रोने वालों में अंधविश्वासों को उखाड़ने की न तो इच्छा है और न ही

साहस। संघ के एक सरसंघ चालक ने कोई पन्द्रह वर्ष पूर्व अन्तर्जातीय विवाहों की बात कही थी। फिर चुप्पी साध ली। यदि संघ पूरी शक्ति लगाकर अपने सौ-दो सौ प्रमुख लोगों के जाति बन्धन तुड़वाकर विवाह करवा कर एक उदाहरण प्रस्तुत कर देता तो एक लहर चल पड़ती। कभी नागपुर के पड़ोस में एक आर्य ने अपनी पुत्री का विवाह पंजाब में कर दिया। तब उसे अपना विदर्भ छोड़ना पड़ा परन्तु एक उदाहरण तो वह बन गया।

अभी एक आर्यसमाजी पत्र में किसी का जाति-पांति के विरुद्ध लेख छपा बताते हैं। लेखक के पूरे कुटुम्ब में एक भी जाति-पांति न तोड़ सका। अपनी दुर्बलताओं से हिन्दू पहले से भी कहीं तिरस्कृत हो रहा है। धर्मनिरपेक्षता की कसौटी ही हिन्दू का तिरस्कार और अल्पसंख्यकों की रागिनी छेड़ना है। गाँधी जी ने जिन्ना के गले में बाहें डालकर हँसते हुए चित्र खिंचवाया था परन्तु आज मोदी के नाम लेकर मुसलमानों को भड़काना धर्मनिरपेक्षता की पहचाना है। मौलाना आज़ाद गुड़गाँव से, अब्दुलगुफ़ार खाँ अम्बाला से चुनाव जीते। यह तो थी धर्म निरपेक्षता परन्तु दिग्विजय, शीला दीक्षित, मोतीलाल बोहरा या मुलायम मालाबार, श्रीनगर या कासिम रिज़वी के चेलों के वोटों से जीत कर तो दिखावें।

दिग्विजय कहता है कि संघ बम बनाना सिखाते हैं। प्रति सप्ताह, प्रतिमास बम फटते हैं। बंगाल के पंचायत चुनाव में भी बम फटे। बम विस्फोट इराक, पाकिस्तान, अफ़गानिस्तान में हो रहे हैं। इन घटनाओं में कितने संघी पकड़े गये? जो पकड़े गये वे कौन हैं? यह सच्च दिग्विजय और उसकी सरकार क्यों छिपाती है। संसद पर आक्रमण क दोषी कौन थे? बटला हाऊस में कौन संलिप्त थे? मुम्बई आक्रमण का सच्च क्या था? कासिम रिज़वी की पार्टी आज काँग्रेस की सगी बहिन बनी हुई है। देश की हत्या करवाने वाली मुस्लिम लीग और काँग्रेस की मैत्री अब वर्षों पुरानी हो गई। गाँधी की भजन पुस्तक में वन्दे मातरम् गीत छपता रहा या नहीं?

आज वन्दे मातरम् का विरोध करने वालों पर दिग्विजय ने कभी टिप्पणी करने का साहस दिखाया? काकौरी केस के बचे क्रान्तिकारियों को जेल से छूटने पर कानपुर में सन्मानित किया जाना था। इतिहास का कटु सत्य है कि गाँधी जी ने काँग्रेस की ओर से यह सन्मान सभा न होने दी। क्यों? केवल इसलिये कि वे क्रान्तिकारी हिंसा के दोषी थे। आज़ाद हिन्द फ़ौज का केस लड़ने गाँधी जी के जीते जी नेहरू आगे आये। क्यों? अब हिंसकों का केस लड़कर सत्ता की प्राप्ति सम्भव थी। देश विभाजन के पश्चात् नेहरू जी और इन्दिरा जी समाजवाद की दुहाई देकर और पूंजीवाद को कोस-कोस कर सत्ता पाते रहे। अब लम्बे समय से समाजवाद को कबरों में दबा कर बाज़ारीकरण की माला फेर कर मनमोहनसिंह, सोनिया पूंजीवाद लादने में सफल हो गये। अधिकांश राजनेता, सांसद व मन्त्री पूंजीपति हैं। क्या यह सत्य नहीं?

हिन्दू की दुर्दशाः- हिन्दू की दुर्दशा का कारण इनकी दुर्बलतायें, अंधविश्वास व सामाजिक रोग हैं। सिनेमा व टी.वी. की नग्नता, अश्लीलता का शिकार इन्हीं की लड़कियाँ-लड़के हो रहे हैं। इनके धर्माचार्य गुरुडम फैलाने में लगे हैं। एकेश्वरवाद तथा ईश्वर की सर्वव्यापकता के प्रचार का प्रचण्ड आन्दोलन चलाने के लिए कोई महन्त-सन्त आगे नहीं आता। मुम्बई के फ़िल्मी कलाकार मुर्दों के मज़ारों पर चादर चढ़ाते, मन्नते माँगते हैं। क्या यह बुद्धि का दीवाला और नास्तिकता नहीं परन्तु सच्च कहना आज मूर्खता है। असत्य भाषण पॉलिसी व बुद्धिमत्ता मानी जा रही है। हिन्दू की दुर्दशा का यही मुख्य कारण है। सन् १९६१ में लाला हरदेव सहाय जी ने अपनी अन्तःवेदना व्यक्त करते हुए हमें कहा था कि आज देश में स्वामी श्रद्धानन्द जी जैसा कोई प्राणों का निर्मोही, निर्भीक, निर्भीड़ और सूझबूझ वाला नेता नहीं है। साधु व्यापार करने में तो चमत्कारी सफलता प्राप्त कर रहे हैं परन्तु धर्मप्रचार की आग रखने वाले बहुत थोड़े हैं।

ऋषि-जीवन का सिंह अवलोकनः- प्रश्न पूछा जाता है कि ऋषि जीवन पर अपनी खोज व चिन्तन का कुछ और सार दीजिये। हमने लक्ष्मण जी के ग्रन्थ में यत्र-तत्र एक-एक अध्याय में तथा ग्रन्थ की समाप्ति पर अपनी ऐसी खोज का सार दिया है यथाः-

१. महर्षि ने गृह-त्याग के पश्चात् शोक व मोह पर ऐसी विजय पाई कि राजाओं के घर में शोक संवेदना के लिए कहने पर कभी नहीं गये। धर्मानुरागी ठाकुर मुन्नासिंह के निधन पर अवश्य एक पत्र में संवेदना प्रकट की।

२. साधुओं ने उन्नीसवीं शताब्दी में देशी-विदेशी देवियों के संग फोटो खिंचवाये। महर्षि ने कभी किसी महिला के संग ग्रुप फोटो भी नहीं खिंचवाया।

३. महर्षि का परकीय लोगों से पहला शास्त्रार्थ अजमेर में हुआ था। अन्तिम शास्त्रार्थ भी राजस्थान में हुआ। आर्यसमाज के प्रथम शास्त्रार्थ महारथी राव बहादुरसिंह जी मसूदा वाले थे। आपने महर्षि की देखरेख में पादरी बिहारीलाल जी ब्यावर से शास्त्रार्थ किया। राजस्थान के दूसरे दिग्गज शास्त्रार्थ महारथी स्वामी नित्यानन्द जी और तीसरे पं. गणपति जी शर्मा थे।

४. चाँदापुर में इतिहास का पहला बड़ा शास्त्रार्थ एक आर्य मुनि महात्मा ने परकीय मतों से किया। दूसरे ही दिन

पादरी व मौलवी बिना सूचना दिये शास्त्रार्थ समर से भाग गये। यह ऐसी पहली घटना थी।

५. एक गोरा पादरी कुक भारत को ईसाई बनाने की डींग मारता मुम्बई पहुँचा। उस के व्याख्यानों की वहाँ धूम थी। ऋषि ने उसे शास्त्रार्थ की चुनौती दी तो वह भारत से ही भाग कर विलायत पहुँच गया।

६. इतिहास में पहली बार किसी भारतीय विचारक नेता ने अपने व्याख्यान में निर्भय होकर (सन् १८७८ में जालन्धर में) अँग्रेजी न्यायपालिका के पक्षपात की पोल खोली-घोर निन्दा की। गाँधी जी जैसा राजनेता प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति तक अँग्रेज जाति की न्यायप्रियता पर अडिग विश्वास रखता था। **(शेष फिर)**

वेद सदन, अबोहर, पंजाब-१५२११६

ऋषि उद्यान में अब संस्कृत सीखने का अवसर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में अब सभी आर्य-जनों के लिए देव भाषा=संस्कृत-भाषा सीखने का अवसर उपलब्ध है। यह प्रशिक्षण नि:शुल्क होगा। संस्कृत-भाषा को सीखने के इच्छुक शीघ्र सम्पर्क करें।

-: सम्पर्क :-

उपाध्याय भैरुलाल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर, राजस्थान

दूरभाष - ०९८२९१७६४६०

।।ओ३म्।।

वेद गोष्ठी का विषय

वेद और सत्यार्थ प्रकाश का १२वाँ समुल्लास

विषय:- चारवाक, बौद्ध, जैन सिद्धान्तों के खण्डन से सम्बन्धित विषय।

१. पृथिव्यादि भूतों के संयोग से शरीर में चेतनता उत्पन्न होती है।
२. विषयों से उपलब्ध क्षणिक सुख-दु:ख ही पुरुषार्थ का फल है, इससे भिन्न स्वर्ग=मोक्ष कुछ नहीं है।
३. मूल-द्रव्य में जगत् की उत्पत्ति करने का स्वाभाविक सामर्थ्य होने से जगदुत्पत्ति में चेतन कर्त्ता की आवश्यकता नहीं है।
४. सर्वशून्य सिद्धान्त।
५. सर्व संसार दु:खरूप का सिद्धान्त।
६. क्षणिकवाद का सिद्धान्त।
७. स्याद्वाद् और सप्तभङ्गी न्याय।
८. जीव से भिन्न अन्य कोई चेतन तत्त्व नहीं है।
९. ईश्वर की सिद्धि में प्रत्यक्षादि प्रमाण सिद्ध नहीं हैं।
१०. ईश्वर का सृष्टिकर्त्ता होना, व्यापक होना, सदा मुक्त होना रूपी गुणों के खण्डन के द्वारा ईश्वर नहीं है।
११. कार्य जगत्, जीव के कर्म और बन्ध अनादि हैं।
१२. जीव अनन्त हैं।
१३. पाषाणादि मूर्ति पूजा और उससे मुक्ति।
१४. मुक्ति का अनन्त काल है।
१५. एक शरीर में अनन्त जीव हैं।
१६. शरीर व भूगोल के पदार्थों की आयु व परिमाण।
१७. हिंसा व अहिंसा का स्वरूप।

सहयोगी ग्रन्थ

१ - सर्वदर्शन संग्रह
२ - प्रकरण रत्नाकर
३ - वेदों का यथार्थ स्वरूप-पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड
४ - स्वामी वेदानन्द जी की टिप्पणियाँ (सत्यार्थ प्रकाश में)

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (प्राथमिक स्तर)

दिनांक : २० से २७ अक्टूबर, २०१३

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति उपलब्ध नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। साथ ही पढ़ाये गये विषयों की लिखित परीक्षा व आपके द्वारा पालन किये गये शिविर के अनुशासन का भी आकलन किया जायेगा, इसी आधार पर प्रमाण–पत्र भी दिये जायेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ना होगा।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
८. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
९. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क ५०० से १५०० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल

कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जाता है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

।।ओ३म्।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में आयोजित १६ से २३ जून २०१३ को योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) लगाया गया। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है। अगला शिविर दिनांक २० से २७ अक्टूबर।

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

---

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर

२४ नवम्बर से १ दिसम्बर, २०१३, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर। अधिकतम संख्या-५०। मात्र पूर्व पञ्जीकृत प्रतिभागियों के लिए। इसमें विद्वद् गोष्ठी द्वारा निर्धारित आर्यसमाज की ध्यान पद्धति का प्रशिक्षण दिया जायेगा व ध्यान करवाने का अभ्यास भी करवाया जायेगा। लिखित एवं प्रायोगिक परीक्षा के बाद योग्य व्यक्तियों को परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षक-प्रमाण पत्र भी दिये जायेंगे। शिविर शुल्क १००० रु. है। २४ नवम्बर सायं ४ बजे तक पहुँचना अनिवार्य है। विलम्ब से आने वालों की शिविर में सहभागिता नहीं हो पायेगी। शिविर का समापन १ दिसम्बर को सायं ५ बजे तक हो जायेगा। इच्छुक व्यक्ति, कृपया सम्पर्क करें-९४१४००३७५६, समय-मध्याह्न १.३० से २.३०।

पता-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. ३०५००१। ईमेल-psabhaa@gmail.com

---

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २० से २७ अक्टूबर-**योग-साधना शिविर प्राथमिक स्तर**, सम्पर्क : ०१४५-२४६०१६४

२. २४ नवम्बर से १ दिसम्बर तक **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर,** सम्पर्क : ०९४१४००३७५६, समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

३. ऋषि मेला ८, ९, १० नवम्बर, २०१३।

कुहकस्य स्वर विषयक महर्षि दयानन्द पर व्यर्थ आक्षेप

- आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा

मुख्य ७ स्वर - परमपिता परमात्मा ने सर्वकल्याण के लिये वेदों का ज्ञान दिया है। वह वेदों का ज्ञान मन्त्रमय है। वेदों के सभी मन्त्र स्वर से युक्त हैं। वे स्वर अनेक प्रकार के हैं। उनमें जो प्रमुख स्वर हैं, उनका निर्देश करते हुए महाभाष्यकार लिखते हैं-

सप्त स्वराः भवन्ति। उदात्तः, उदात्ततरः,
अनुदात्तः अनुदात्ततरः,
स्वरितः, स्वरिते य उदात्तः सोऽन्येन विशिष्टः,
एकश्रुतिः सप्तमः।।[१]

महाभा. १/२/३३पृ. ३१।।
तु.तैत्ति. प्रातिशा. १/४१।।

अर्थात् उदात्त, उदात्ततर, अनुदात्त, अनुदात्ततर, स्वरित एवं स्वरित में जो उदात्त हैं, उस सामान्य = स्वतन्त्र उदात्त से विशिष्ट= भिन्न एवं ७वाँ एकश्रुति, ये ७ स्वर होते हैं।

स्वर महत्त्व - वेद के अर्थ को समझने के लिये जितने भी उपाय बताये गये हैं, उनमें स्वर शास्त्र प्रधान है। व्याकरण और निरुक्त ग्रन्थ भी स्वर शास्त्र के अंग बनकर ही वेदार्थ में सहायक होते हैं। स्वर शास्त्र का विरोध होने पर दोनों शास्त्र रुक जाते हैं। स्वर ज्ञान के बिना मन्त्र का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है और अर्थ का अनर्थ भी हो जाता है।

वेदों के अर्थ **आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक** ३ प्रकार से किये जाते हैं। स्वर ज्ञान के बिना इन तीनों अर्थों का परिज्ञान असम्भव ही रहता है।

स्वर शास्त्र - वेदों में समस्त विद्याओं के अक्षय कोष हैं। वेद की विद्याओं को जानने के लिये षडंगों का ऋषि मुनियों ने प्रवचन किया है। वे षडंग वेदों के अर्थों को जानने में सहायक हैं। शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, कल्प ये षडंग कहे जाते हैं।[२] उन षडंगों में व्याकरण प्रधान है। व्याकरण के अन्दर ही स्वर शास्त्र आता है।

वेदार्थ में स्वरों की आवश्यकता - यह स्वर शास्त्र वेद के सूक्ष्म अर्थ को बताता है। स्वर शास्त्र क्या करता है? इसे स्पष्ट करते हुए वेंकट माधव ने लिखा है-

अंधकारे दीपिकाभिर्गच्छन्न स्खलति क्वचित्।
एवं स्वरैः प्रणीतानां भवन्त्यर्थाः स्फुटा इति।।

स्वरानुक्र. १/८/१२।।

अर्थात् जैसे अन्धकार में दीपक या मशालों की सहायता से चलता हुआ मनुष्य मार्ग में कहीं ठोकर नहीं खाता, उसी प्रकार स्वरों की सहायता से किये गये वेद के अर्थ स्फुट= सन्देह रहित होते हैं।

स्वरों द्वारा नाम, आख्यात का भेद - वेदों के सभी शब्द स्वरों से अनुस्यूत हैं। वे शब्द नाम हैं? या आख्यात? इसका ज्ञान स्वर ही कराते हैं। जैसे कर्ता शब्द आकृति दृष्ट्या एक ही है, वह कर्ता शब्द नाम भी है और आख्यात भी।[३] आख्यात शब्द होने पर **कर्ता** शब्द अन्तोदात्त होता है, यथा- **सः कर्ता**। इस प्रयोग में **कर्ता** शब्द का **क** अनुदात्त है एवं **ता'** उदात्त है। और नाम शब्द होने पर **कर्ता** शब्द आद्युदात्त होता है, यथा- **सः कर्ता'**। इस प्रयोग में **कर्ता** का **क** उदात्त व **ता'** स्वरित है।

स्वरों के द्वारा ही नाम= संज्ञा वाचक शब्दों का तथा आख्यात शब्दों का भेद स्पष्ट होता है, इसलिए वेंकट माधव ने भी कहा है-

नामाख्यातविभागश्च स्वरादवगम्यते।

ऋग्. अनु. माधवकृत, मद्रा. परि.शि.पृ. सीवी।।

अर्थात् नाम व आख्यात शब्दों का विभाग स्वर से ही जाना जाता है।

स्वरों के द्वारा अर्थज्ञान - स्वर अर्थावबोध में निमित्त बनते हैं, अतः मीमांसा दर्शन में शबर स्वामी लिखते हैं-

अथ त्रैस्वर्यादीनां किमर्थं समाम्नानमिति?
उच्यते, अर्थावबोधनार्थं भविष्यति।

शा.भा.मीमां. ९/२/३१।।
पृ. २४८६।।

अर्थात् यज्ञ में यदि मन्त्र एकश्रुति से ही पढ़े जाते हैं, तो मन्त्रों में ३ उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि स्वरों का पाठ क्यों है? उत्तर दिया है- अर्थज्ञान के लिए।

भर्तृहरि ने अर्थज्ञान में स्वर का महत्त्व निर्दिष्ट करते हुए लिखा है-

सामर्थ्यमौचिती देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः।
शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः।।

वाक्यपदीय २/३१८।।
काशी सं. पुण्यराजकृत, पृ. २१६।।

भर्तृहरि ने इस श्लोक में स्पष्ट किया है कि शब्दार्थ के निश्चय न होने पर सामर्थ्य, औचित्य, देश = काल, व्यक्ति एवं उदात्तादि स्वर विशेष अर्थ को ज्ञापित करने में कारण बनते हैं। यथा-

दात्तः गौप्तः।

ये **दात्तः, गौप्तः** शब्द **महर्षि पाणिनि** के **उदक्च**

विपाशः अ. ४/२/७३, सूत्र द्वारा अञ् प्रत्यय करके निष्पन्न होते हैं। पाणिनि ने इस सूत्र में स्वरों द्वारा अर्थ भेद में होने वाली सूक्ष्म विवेचना का निर्देश किया है। सूत्र का अर्थ है-

विपाशः= विपाट् नदी के **उदक्**= उत्तर देश के किनारे पर स्थित जो कूप हैं, उनके अभिधेय होने पर, **च**= भी, **निर्वृत्तम्** आदि अर्थों में **अञ्** प्रत्यय होता है।

दात्तः, गौप्तः इसी सूत्र के उदाहरण हैं। ये **दात्तः, गौप्तः** जैसे अञ् प्रत्यय द्वारा बने, वैसे ही अण् प्रत्यय द्वारा भी बनते हैं। आकृति में कोई भेद नहीं होता, पर अर्थ भेद अवश्य होता है। इनका वह विशिष्ट वाच्यार्थ भेद स्वर से ही ज्ञात होता है।

जब **अञ्** प्रत्यय से **दात्तः, गौप्तः** शब्द बनेंगे, तब वे **आद्युदात्त** होंगे और वे **विपाट्**= व्यास नदी के उत्तर तट पर स्थित दत्त व गुप्त द्वारा निर्मित कूप के वाचक होंगे। यदि **दात्तः, गौप्तः** शब्द औत्सर्गिक अण् प्रत्यय द्वारा निष्पन्न होंगे, तब वे **दात्तः, गौप्तः** शब्द **अन्तोदात्त** होंगे तथा **विपाट्** नदी के दक्षिण तट पर स्थित दत्त व गुप्त द्वारा निर्मित कूप के वाचक होंगे। कूप विपाट् नदी के उत्तर के हैं या दक्षिण के, इसका परिज्ञान **आद्युदात्त, अन्तोदात्त** स्वरों के द्वारा ही होगा।

स्वर वेदार्थ में अत्यन्त उपयोगी हैं यह सुस्पष्ट है। वेदार्थ में स्वरों की उपयोगिता निर्दिष्ट करते हुए साहित्यदर्पणकार **विश्वनाथ** ने भी कहा है-

स्वरस्तु वेद एव विशेषप्रतीतिकृत्।

साहि.दर्प.परि. ३।।

अर्थात् स्वर वेद में ही विशेष अर्थ का बोधन कराते हैं। तात्पर्य हुआ यद्यपि लोक में भी स्वर प्रयुक्त होते हैं, तथापि वेदार्थ में स्वरों का अतिमहत्त्व है।

वेदार्थ में स्वर - भ्रातृ'व्यस्य वधाय', यजु. १/१८, मन्त्र में **भ्रातृव्यस्य** शब्द आया है। लोक में **भ्रातृव्य** शब्द के **शत्रु** और **भतीजा** दो अर्थ प्रसिद्ध हैं। अब यहाँ कौन-सा अर्थ लिया जाये? यदि भतीजा अर्थ करते हैं तो **वधाय=मारने के लिए**, अर्थ भतीजे सम्बन्ध के साथ उचित नहीं लगता। उस सम्बन्ध में **मारने के लिए** अर्थ संगत नहीं होगा, क्योंकि भतीजे को **मारना** अर्थ में सम्बन्ध का विघात होगा और यदि भ्रातृव्यस्य पद का **शत्रु** अर्थ लेते हैं, तो **मारने के लिए** अर्थ संगत हो जाता है। यह अर्थ भेद की विशेषता स्वर से ही जानी जायेगी।

सूक्ष्म अर्थ व स्वर - शब्द के सूक्ष्म अर्थ को समझने में स्वर ज्ञान अति सहायक है। वेद मन्त्रों में ही इसकी अनेक अन्तः साक्षियाँ हैं। उदाहरणस्वरूप मन्त्र है-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि'जिजीविषेच्छतं समा'ः।

यजु. ४०/२।।

मन्त्र में **जिजीविषेत्** क्रियापद आया है। पद का **ष** उदात्त है। **जिजीविषेत्** पद सन्नन्त प्रक्रिया के लिङ् तथा कर्म का रूप है, इसमें जीव धातु है। यहाँ धातु की विशेषता नहीं है, सन् प्रत्यय की है। धातु का अर्थ[४] है प्राणधारण करना। प्राण धारण करना व्यक्ति के अधीन नहीं है। प्राण धारण कर्म तो मनुष्य जब क्रियायें बन्द कर देता है, मूर्छित होता है, तो भी होता है। सोता है तब सोते समय भी प्राण चलते ही हैं। इसी प्रकार बहुत बार मनुष्य विष आदि से मरना चाहता है, किन्तु मरता नहीं है, प्राण लेता ही है। मनुष्य की अन्य क्रियायें चलना, किसी को बनाना आदि तो उसके स्वयं के अधीन होती हैं और उन क्रियाओं को करने वाला उन्हें पूर्ण इच्छा से करता है, इच्छा न होने पर नहीं भी करता है। **जिजीविषा** वह क्रिया है जिसमें वह प्राण धारण करने की इच्छा मात्र कर सकता है, किन्तु प्राण धारण नहीं कर सकता है, अतः यहाँ धातु की अप्रधानता है। सन्नन्त **जिजीविषा** धातु में प्राण धारण करने की इच्छा करता है, यह इच्छा अर्थ ही प्रधान है। इस कारण सन् प्रत्यय के स्वर के बलवान् होने से **जिजीविषेत्** में **ष** उदात्त होता है।

लौकिक प्रयोगों में सन्नन्त क्रियावाची शब्दों में धातु का स्वर ही बलवान् होता है। यथा- **चिकीर्षति, जिहीर्षति, चिचीषति** यहाँ धातु को आद्युदात्त होता है। क्योंकि यहाँ सन् अर्थ प्रधान नहीं है, अपितु करना, हरना, चुनना आदि अर्थों की प्रधानता है। व्यक्ति करने, हरने, चुनने की इच्छा करके उनको प्रयत्न करके शीघ्र पूरा भी करता है अतः धातु का अर्थ प्रधान है।

शब्द, पद स्वरूप निर्णय एवं स्वर ज्ञान - वेदों में प्रयुक्त होने वाले कई स्थानों पर ऐसी पदावलियाँ हैं, जिनका निर्णय करना कठिन हो जाता है कि यह **एक पद है या दो पद** हैं। ऐसे स्थलों की संदेह निवृत्ति स्वरों के द्वारा होती है। यथा-

वने न वा यो न्य'धायि चाकन्।

ऋ. १०/२९/१।।

पदपाठ- वने'। न। वायः। नि। अधायि। चाकन्।

इस ऋग्वेदीय मन्त्र में **वा यो** यह जो पदावली है वह सन्देह ग्रस्त है। अब यहाँ एक पद मानें या २ पद? क्या करें?

इस स्थल में आचार्य शाकल्य ने तो दो पद मानें हैं, परन्तु महर्षि यास्क ने इस वा यो स्थल को एक पद माना है और शाकल्य का खण्डन किया है। यथा-

वन इव वायो वेः पुत्रश्चायन्निति वा कामयमान इति वा। वेति च य इति च चकार शाकल्यः।

उदात्तं त्वेवमाख्यातमभविष्यत् असुसमाप्तश्चार्थः।

निरु. ६/५/११४ पृ. ४४२।।

अर्थात् **वायः- वि** = पक्ष का पुत्र (वह भोज्य की इच्छा करता हुआ। **न्यधायि**= बैठा होता है) यह मन्त्र के **वायो** पद का अर्थ है। **वा इति य इति** ऐसा जो शाकल्य ने दो पद मानकर **वा यो** पद का अर्थ किया है, इससे **न्यधायि** आख्यात पद को पक्ष में उदात्त पायेगा और अर्थ भी पूर्ण नहीं होगा।

यास्क के कहने का तात्पर्य है कि पदकार शाकल्य ने **वा यो** पद का जो **वा यः** पदच्छेद किया है, वह ठीक नहीं है। यदि वा यः ऐसा दो पद वाला पदच्छेद करेंगे, तो **न्यधायि** आख्यात पद में **यद्वृत्तान्नित्यम्** अ. ८/१/६६ सूत्र द्वारा पक्ष में उदात्त होने लगेगा, क्योंकि **वा यः** ऐसा पदच्छेद करने पर आख्यात पद यत् से युक्त हो जायेगा अतः **वा यः** पदच्छेद ठीक नहीं है। वेद में **न्यधायि** पद अनुदात्त है अतः **वायः** पदच्छेद ही ठीक है।

दूसरा दोष यह होगा कि **वा, यः** पदच्छेद करने पर मन्त्र का अर्थ भी अपूर्ण रहेगा। क्योंकि वाक्य में यत् आने पर जब तक तद् का प्रयोग न हो तब तक अर्थ पूर्ण नहीं होता।

इन दोषों का ज्ञापन स्वर के द्वारा ही होता है। इस प्रकार वेदार्थ में स्वरों का दीपक स्थानीय महत्त्वपूर्ण स्थान है।

महर्षि दयानन्द व स्वर - महर्षि दयानन्द ने स्वरों के द्वारा जो अर्थ वैशिष्ट्य होता है उसे ध्यान में रखते हुए ही वेद मन्त्रों के अर्थ किये हैं। पाश्चात्य विद्वानों एवं सायण उव्वट, महीधर आदि दैशिक विद्वानों ने स्वरों पर ध्यान नहीं दिया है। अर्थ करने में अनेकत्र भ्रान्तियाँ की हैं। महर्षि दयानन्द ने उनके स्वर विषयक दोषों का बहुत्र अपने वेदभाष्य में ज्ञापन किया है। मोक्षमूलर की स्वर विषयक भ्रान्ति बताते हुए महर्षि लिखते हैं-

मेधा= पवित्रकारिका प्रज्ञा। केचिद् भ्रान्ताः 'मेधा' इत्यत्र 'मेध्या' इति पदमाश्रित्याद्युदात्तेन मेध्यपदार्थायै- तत् पदमिच्छन्ति, तच्चासमञ्जसमेव। कुतः? 'मेधा' इत्यन्तोदात्तस्य दर्शनात्। भट्टमोक्षमूलरोऽपि 'मेधा' इति सविसर्गं पदं मत्वा बुद्धिपदार्थायैतत् पदं विवृणोति, तच्चाप्यसमञ्जसमेव। कुतः? 'मेधा' इति निर्विसर्जनी- यस्य पदस्य जागरूकत्वात्।

दया.भा.पदार्थः, ऋ. १/८८/३।।

अर्थात् **मेधा** पवित्रकारिका प्रज्ञा कही जाती है। कोई भ्रान्त हुये **मेधा** इस पद में **मेध्या** ऐसा पद मानकर आद्युदात्त मानते हैं और मेध्य पदार्थ के कथन के लिए उस पद को चाहते हैं, वह अनुचित ही है, क्योंकि मेधा पद अन्तोदात्त ही देखा जाता है। **भट्टमोक्षमूलर** भी **मेधा** पद को **मेधाः** ऐसा सविसर्ग पद मानकर बुद्धि पदार्थ के लिए इस पद का व्याख्यान करता है, वह भी अनुचित ही है। क्योंकि मेधा यह विसर्ग रहित पद ही बुद्धि अर्थ को देने वाला है।

सायणाचार्य का दोष निर्दिष्ट करते हुए महर्षि लिखते हैं-

मारुतम्= मरुतां समूहः। अत्र मृग्रोरुतिः, उ. १/ ९४ इति मृङ् धातोरुतिः प्रत्ययः। अनुदात्तादेरञ् अ. ४/२/४४ इत्यञ् प्रत्ययः। इदं पदं सायणाचार्येण मरुतां सम्बन्धि तस्येदम् इत्यण् व्यत्ययेनाद्युदात्तत्वमित्यशुद्धं व्याख्यातम्।

दया.भा.पदार्थः, ऋ. १/३७/१।।

अर्थात् **मारुतम्= मरुतों का समूह।** यहाँ **मृग्रोरुतिः**, उ. १/९४ इस सूत्र से मृङ् धातु से उति प्रत्यय हुआ है। **अनुदात्तादेरञ्** अ. ४/२/४४ सूत्र से अञ् प्रत्यय है। यह **मारुतम्** पद सायणाचार्य ने **'मरुतों का सम्बन्धी'** इस अर्थ में **तस्येदम्**, अ. ४/३/१२०, सूत्र से अण् प्रत्यय द्वारा सिद्ध किया है तथा व्यत्यय से आद्युदात्त व्याख्यात किया है, सो अशुद्ध है।

उव्वट, महीधर की स्वर दोषविषयक कृति को इंगित करते हुए महर्षि लिखते हैं-

आङ्गिरसि= याङ्गिरीभिरग्न्यादिभिर्निर्वृत्ता सिद्धा सा। ऊवटमहीधराभ्यामिदं निघातत्वात् संबोधनान्तं पदमबुद्ध्वा व्याख्यातमत एतयोः स्वरज्ञानमपि नास्त्यर्थज्ञानस्य तु का कथा?

दया.भा.पदार्थः, यजु. ४/१०।।

अर्थात् **आङ्गिरसि**= जो अग्नि आदि पदार्थों से सिद्ध की हुई वह। उव्वट, महीधर ने जो **आङ्गिरसि** पद के निघात होने से यह सम्बोधनान्त पद है, ऐसा न जानकर व्याख्यात किया है, अतः ज्ञात होता है इन दोनों को स्वर का ज्ञान भी नहीं है, इनके अर्थ ज्ञान की तो कथा ही क्या?

महर्षि दयानन्द ने इन विद्वानों की स्वर विषयक एतादृशी त्रुटियाँ अनेकत्र निर्दिष्ट की हैं। उदाहरण स्वरूप इन स्थलों से स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द स्वर विषय के अप्रतिम ज्ञाता थे।

आधुनिक वेदज्ञों का महर्षि पर व्यर्थ आक्षेप - आधुनिक वेदज्ञ महर्षि के स्वर विषयक इस अप्रतिम ज्ञान को जानने में असमर्थ रहे हैं। वे अनेकत्र ऊहापोह में पड़ जाते हैं कि स्वामी दयानन्द ने अमुक मन्त्र का यह अर्थ कैसे कर दिया? मन्त्र का शब्द स्थल तो ऐसा नहीं दीख रहा है!

उन ऊहापोह में पड़े जनों का एक व्यर्थ आक्षेप्य स्थल

महर्षि कृत ऋग्वेद के दशम मण्डल के १२९वें नासदीय सूक्त के प्रथम मन्त्र के[५] **'कुह कस्य'** पदों का अर्थ हैं। जिसे वे प्राय: प्रस्तुत करते रहते हैं।

मन्त्र में **कुह कस्य** ये दो पद हैं। इन दोनों पदों का क्रमश: संहिता व पदपाठ का स्वर है- कुह कस्य, कुह कस्य अर्थात् इन पदों के आदि वर्ण **कु** और **क** उदात्त स्वर वाले हैं। आचार्य सायण ने भी **कुह कस्य** स्थल में दो पद मानते हुए इनका **कुह=कुत्र, कस्य=कस्यभोक्तुर्जीवस्य** ये अर्थ निर्दिष्ट किये हैं, जो बड़े ही स्थूल अर्थ हैं।

महर्षि दयानन्द ने इस स्थल में दो पद मानते हुए **कुह कस्य** पदानुपूर्वी का गम्भीर अर्थ निर्दिष्ट करते हुए लिखा है-

किमावरीव:= यत् प्रात: कुहकस्यावर्षाकाले धूमाकारेण वृष्टं किञ्चिज्जलं वर्तमानं भवति, यथा नैतज्जलेन पृथिव्यावरणं भवति, नदीप्रवाहादिकं च चलति....।।

ऋ.भा.भू.सृष्टिविद्या.पृ. १२४।।

अर्थात् **किमावरीव:**= जो प्रात:, **कुहकस्य**= अवर्षा या वर्षा काल में धूमाकार से वर्षा हुआ थोड़ा जल वर्तमान होता है, जैसे इस जल से न पृथिवी का आवरण होता है और न नदी प्रवाह आदि चलता है।

मन्त्र के इस अर्थ में महर्षि दयानन्द ने **कुहकस्य** सांहितिक पदावली का प्रयोग किया है। जिसे देखकर बहुत से विद्वान् ऐसा समझ बैठे हैं कि महर्षि ने **कुहकस्य** में दो पदों को एक पद माना है, जब कि ये दो पद हैं। ये पृथक्-पृथक् पद हैं, तभी तो पृथक्-पृथक् आद्युदात्त शब्द हैं।

यह नासदीय सूक्त एम.ए. की वेदविषय परीक्षा में भी अन्य सूक्तों के साथ लगा हुआ है। अभी गतवर्ष २०१२-२०१३ में हमारे **पाणिनि कन्या महाविद्यालय वाराणसी** की कुछ ब्रह्मचारिणियों ने **काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी** से एम.ए. की परीक्षा दी है। प्रथम वर्ष में वेद की विषय वस्तु पढ़ते समय उनके वेदविभाग के वेदज्ञों ने उनसे कहा- महर्षि दयानन्द ने **कुहकस्य** पदों को एक पद मानकर जो **कोहरा** अर्थ किया है, वह ठीक नहीं किया है।

उस समय मैं बाहर थी, जब मैं विद्यालय में पहुँची तो बालिकाओं ने बड़े ही आश्चर्य से पूछा- आचार्या जी! क्या महर्षि दयानन्द ने **कुहकस्य** का गलत अर्थ किया है? बालिकाओं के इस आश्चर्य का उत्तर देते हुए मैंने कहा- महर्षि ने **कुहकस्य** पदों को न एक पद माना है, न दोनों पदों का मात्र कोहरा अर्थ किया है, अपितु उन्होंने **कुह** का अर्थ **किञ्चित्** = असार्वत्रिक अर्थ किया है तथा **कस्य** पद का अर्थ जल किया है यह संस्कृत अर्थ से स्पष्ट है। महर्षि ने भाषार्थ में जो कोहरे का **जल** यह अर्थ दिया है वह किञ्चित् की व्याख्या है। किञ्चित् के अर्थ गाम्भीर्य को ही कोहरे के सादृश्यार्थ से दर्शाया है। कोहरे का जल सर्वत्र एक जैसा नहीं होता, यत्र कुत्र होता है, **कुह**=कहाँ का ही वह द्योतक होता है।

निष्कर्षत: स्पष्ट है कि महर्षि **कुह कस्य** दोनों शब्दों को पृथक् ही मानते हैं, जो आद्युदात्त पद है। मात्र अर्थ प्रदर्शन के लिए दोनों कुहकस्य' पदों को इकट्ठा पढ़ दिया है।

पदों को एक साथ पढ़ने की प्राचीन परम्परा - दो पदों को इकट्ठा पढ़ने की यह प्राचीन परम्परा है। जैसे वाचस्पति: पद में **वाच:** शब्द षष्ठ्यन्त है, पुनरपि इकट्ठा लिखा, पढ़ा जाता है। इतना ही नहीं, दो व्यवहित पद भी अर्थ निर्देश के लिए इकट्ठे पढ़े जाते हैं। यथा-

पदव्यवायेऽपि पदे एकीकृत्य निरुक्तवान्।
गर्भं निधानमित्येते न जामय इति त्वृचि।।

शौ.बृहद्दे. २/११३, पृ. ६२।।

अर्थात् पद के व्यवधान होने पर भी दो पदों को इकट्ठा करके यास्क ने व्याख्या की है। जैसे- न जामये, निरु. ३/७/६, इस मन्त्र में व्यवहित **गर्भं निधानम्**= दो पदों को इकट्ठा करके **गर्भनिधानीम्** यह दोनों पदों का एक अर्थ दर्शाया है, जबकि गर्भं निधानम् पदों के मध्य **सवितु:** पद है।[६]

इस प्रकार महर्षि दयानन्द स्वर के विशिष्ट ज्ञाता थे। उन्होंने स्वर के विपरीत कोई अर्थ नहीं किया। आधुनिक जन महर्षि पर जो **कुह कस्य** अर्थ विषयक आक्षेप करते हैं, वह व्यर्थ आक्षेप है। महर्षि ने **कुह कस्य** इन दो पदों को एक पद नहीं माना है, अपितु दो पद मानकर ही अर्थ किया है। यह मन्त्र के महर्षि कृत सम्पूर्ण अर्थ से स्पष्ट है। अर्थ की स्पष्टता के लिये महर्षि ने दो पदों को इकट्ठा अवश्य पढ़ा है पर एक पद नहीं माना। आधुनिक वेदज्ञ अपनी आक्षेप्य भ्रान्ति दूर करें और छात्रों को सही दिशा प्रदान करें।

टिप्पणी

१. छन्द: पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते
शिक्षाघ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।।
पा.शि. ४१-४२।।

२. नाम वाचक कर्ता' शब्द तृन्नन्त है, नित्वात् अ. ६/१/१९१, से आद्युदात्त है।

३. आख्यात कर्ता शब्द ल्युडन्त है, अन्तोदात्त है। न लुट् अ. ८/१/२९, के नियम से निघात का अभाव है।

तास्येनुदात्ते. अ. ६/१/१८० के विधान से प्रथम तो अनुदात्त हुआ ततः उदात्त निवृत्ति स्वर से ता उदात्त हुआ। ४. जीव प्राणधारणे, भ्वादिगणः।

५. नास'दासीन्नो सदा'सीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्यो'मा परो यत्।

किमाव'रीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमा'सीद्गह'नं गभीरम्।। ऋ. १०/१२९/१।।

६. न जामये तान्वो रिक्थमारैक् चकार गर्भं सनितुर्निधानम्।

यदी मातरो जनयन्त वह्निमन्यः कर्ता सुकृतोरन्य ऋन्धन्।। निरु. ३/४/६, ऋ. ३/३१/१।।

- प्राचार्या-पाणिनि कन्या महाविद्यालय, वाराणसी-१०

ई-मेल द्वारा परोपकारी निःशुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही निःशुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अतः पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह निःशुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल- psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर **'मन्त्री परोपकारिणी सभा'** अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में ठोस श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्राय: हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहे हैं, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला २०१४ दिल्ली में प्रचार-प्रसार की योजना तैयार की गयी है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। **२.** आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। **३.** दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है व होगी। **४.** पाखण्ड, मक्कारी, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। **५.** सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। **६.** सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है, जरूरी है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा-१.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में होगी। लागत मूल्य ५०/- रुपये प्रति पुस्तक। **२.** ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग २०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में। लागत मूल्य ३०/- रुपये प्रति पुस्तक। **३.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी से इतर (अन्य) भाषियों के लिए सी.डी.या डी.वी.डी. के माध्यम से उपलब्ध करवाया जायेगा। इस डी.वी.डी. में लगभग १८ भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश होगा। लागत मूल्य लगभग २५/- होगा। **४.** संक्षिप्त ऋषि जीवन चरित्र अंग्रेजी में। लागत मूल्य १०/- रुपये।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को नि:शुल्क या अल्प मूल्य में वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा संस्थानों तक पहुँचे इसके लिए अच्छी वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो। जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : आचार्य दिनेश, चलदूरभाष-७७३७९०४९५०

कबीर

लेखक - चमूपति

अनुवादक - मोहनलाल तँवर

आचार्य चमूपति हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, अरबी के अद्‌भुत विद्वान्‌ थे। आपकी कवितायें आज भी उतनी ही महत्वपूर्ण है, आप वैदिक साहित्य के गवेषक और व्याख्याकार थे। आपका यह लेख उस धारा से पृथक्‌ होकर भी उतना ही महत्वपूर्ण है यह अंग्रेजी विश्वभारती त्रैमासिक के जनवरी १९२७ के अंक में छपा है। पाठकों के ज्ञानवर्धन हेतु अनुवाद प्रस्तुत है। -सम्पादक

कबीर की गणना भारत एवं विश्व में एक सम्मानित कवि सन्त के रूप में की जाती है। उनको सम्मान इन्हीं दो गुणों (कवि व सन्त) के कारण दिया जाता है। उनमें महान्‌ कवि होने के गुण प्रकृति प्रदत्त थे। वे कभी-कभी ही जनता में जाते थे, शेष समय वे अन्तर्मुखी होकर चिन्तन में लीन रहते थे। उन्होंने अपना जीवन का लक्ष्य बौद्धिकता के बजाय धार्मिक रखा। कबीर ने अपने लाभ के लिए कभी कविता नहीं लिखी उनके हृदय में धार्मिक व सामाजिक सुधार की अग्नि प्रज्ज्वलित रहती थी और उनका सन्देश धर्म व समााज सुधार को लेकर ही था। उनके अन्तर्मन में उठते हुए भाव उन्हें विवश करते थे कि वे इन दोनों कार्यों को करें। सभा-सम्मेलनों में वे बिना कोई समाज अथवा धर्म की परम्परा तोड़े साहित्य के माध्यम से ही इन बुराइयों को समाप्त करना चाहते थे। उनमें इस प्रकार की शिक्षायें प्रकृति प्रदत्त थीं।

औपचारिक रूप से ही उन्होंने अपना धार्मिक गुरु स्वामी रामानन्द जी को बनाया अन्यथा वे अपनी आत्मा की महानता को ही अपना गुरु मानते थे। कबीर अपने आत्मज्ञान के द्वारा ही प्रेरणा प्राप्त करते थे। रामानन्द एक उदार सन्देश वाहक थे और उनके निर्णय के अनुसार ही वे चाहते थे कि धर्म व समाज से सम्बन्धित विचारों का निर्माण खुले मस्तिष्क वाले उदार लोगों के द्वारा हो और इस धर्म की रूपरेखा मानव एकता के रूप में हो। इसी बात के कबीर अग्रदूत थे। भारत उन सन्तों का ॠणि है जिन्होंने छोटी-छोटी जातियों में उत्पन्न होकर अपने-अपने सम्प्रदायों की स्थापना की तथा कबीर भी उनमें से एक थे।

मानव की प्रारम्भिक अवस्था में आत्मोत्थान की जो भावना होती है, उसी भावना के अन्तर्गत कबीर दीक्षित थे। कबीर एक हिन्दू विधवा से उत्पन्न हुए थे, माँ ने लोकलाज वश कबीर को अपने से पृथक्‌ कर दिया, तत्पश्चात्‌ एक मुसलमान जुलाहा दम्पत्ति ने अपने पुत्र के समान उन्हें पाला। मूल रूप से वे अपने को अहिन्दू माता-पिता की सन्तान मानते थे और इसी कारण वे स्वयं को हिन्दू धर्म से पृथक्‌ मानते थे। जो हिन्दुओं की आम धारणा होती है उस धारणा के विपरीत वे स्वयं को हिन्दू नहीं मानते थे। रामानन्द जी को छोटी जातियों यथा चमार, नाई आदि को अपना शिष्य बनाने में कोई आपत्ति नहीं थी, परन्तु किसी मुस्लिम को शिष्य अंगीकार करना उन्हें स्वीकृत नहीं था। उत्साही शिष्यों ने एक उपाय निकाला कि कबीर अपनी तरफ से कोई ऐसी पहल करे कि उनके व्यवहार से प्रभावित होकर रामानन्द जी उन्हें अपना शिष्य अंगीकार कर लें। एक धुंधली सुबह जब रामानन्द जी गंगा स्नान करके लौट रहे थे, तो कबीर उनके रास्ते में लेट गये। रामानन्द जी राम-राम के मन्त्र का जाप कर रहे थे, तो कबीर ने उनके चरणों में अपना सर रख दिया। कबीर की तृषित आत्मा के लिए यही पर्याप्त था। गुरु के चरण स्पर्श करते ही राम नाम मन्त्र कबीर के लिए गुरु मन्त्र बन गया।

इसमें कोई संशय नहीं कि कबीर ने रामानन्द जी को साष्टांग प्रणाम किया और स्वयं को उनके अर्पित कर दिया परन्तु संस्थापित हिन्दू परम्पराओं व मान्यताओं के वो घोर विरोधी थे। जाति प्रथा एवं ऊँचनीच की भावनाओं से घृणा करने वाले कबीर अपने जुलाहे के पेशे से अन्त तक जुड़े रहे। कपड़ा बुनने के लिए जब वे खड्डी पर बैठते थे तो वे आत्मा के ताना-बाना सम्बन्धी गीत गाते थे, जो उस समय की स्थापित मान्यताओं के विरुद्ध होते थे। वस्त्र बुनने के पेशे के अनुरूप ही उनके गीतों में अलंकार होते थे जो वस्त्रनिर्माण के समय जो-जो वस्तु व क्रियायें होती है, उस बात से जुड़े होते थे। उस समय उनका यह प्रसिद्ध गीत चलता था:-

झीनी झीनी बिनी चदरिया

काहे का ताना काहे की भरनी, कौन तार से बिनी चदरिया,
इंगला, पिंगला ताना भरनी, सूक्षम तार से बिनी चदरिया।।
आंत कंवल दल चरखा डोले, पांच तत्त गुन तिनी चदरिया।।
सांई को सियत मास दस लागै, ठोक ठोक के बिनी चदरिया।।

सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी, औढ़ के मैली किनी चदरिया।।
दास कबीर जतन से ओड़ी, ज्यों कि त्यों धर दीनी चदरिया।।

अन्तिम दो पंक्तियों से प्रतीत होता है कि कबीर दास जी अपनी जीवन पद्धति को सर्वसाधारण, ईश्वर तथा भविष्य वक्ताओं से पृथक् रूप से सावधानी पूर्वक जीने की कला का रूपक मानते हैं। साधारणतया लोग जुलाहे कार्य को सामाजिक रूप से गौण मानते हैं, परन्तु कबीर का विश्वास है कि इस कार्य को वे अन्तिम क्षण तक जारी रखेंगे। जो कबीर से प्रेम करते थे उन्हें भी कबीर श्रम के महत्त्व के प्रति सजगता की बात बताते रहते थे। धन को लेकर के जो क्लेश होते थे उसके प्रति कबीर तिरस्कार की भावना रखते थे। उनका सम्बन्ध चरित्र की उज्ज्वलता एवं व्यवसाय की पावनता से था। उनका जुलाहे के व्यवसाय को निरन्तर जारी रखना सामाजिक अन्याय के विरुद्ध एक क्रान्तिकारी तथा दृढ़ आग्रह था। हिन्दू-मुसलमानों में धर्म को लेकर जो वाद-विवाद होता था, कबीर उस की तरफ सजग रहते थे। एक मुस्लिम सूफी सन्त शेख तकी के विचारों को वे शिष्य के रूप में ग्रहण करते थे तथा अपनी कविता में उन विचारों का वर्णन करते रहते थे, यह उनके भ्रमण के दौरान होता था। मीर तकी को वे सदैव स्मरण करते रहते थे और उनके विचारों के सन्दर्भ को लेकर अपनी कविता में वर्णन करते रहते थे। परन्तु दूसरे पक्ष में वे अपनी आध्यात्मिक जागृति का श्रेय स्वामी रामानन्द जी को देते थे।

काशी में जन्म लिया, रामानन्द जी से प्रेरणा मिली, इन्हीं दो बातों को लेकर अपने गुरु के प्रति श्रद्धा रखते थे और इसी कारण अन्त तक उनके वैष्णव धर्म सम्बन्धी शिक्षायें जारी रही। कबीर अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति का सम्बन्ध अद्वैत से रखते थे इसे सूफीज्म भी कहा जाता है, जिसका आधुनिक स्वरूप शंकर के नवीन वेदान्त से प्रारम्भ होता है। यदा कदा कबीर की वाणी में उपनिषदों की झलक भी दिखाई देती है, परन्तु प्रख्यात वेदान्त के आचार्यों की रहस्यमयी सूक्ष्म तार्किक शब्दावली के स्थान पर उनकी भाषा मधुर बोधगम्य एवं जनसाधारण के समझ में आने जैसी है। कबीर को आत्म स्वन्त्रता प्रिय थी। उन पर हम किसी सम्प्रदाय अथवा किसी विशेष विचारधारा का ठप्पा लगा कर उन्हें सीमाओं में नहीं बान्ध सकते। हिन्दू-मुस्लिमों के समाराहों की बातें उनको अच्छी नहीं लगती थी। मुसलमानों को वे कहते थेः-

तुम संसार में मस्जिदों का निर्माण करते हो। मिथ्या रोज़े करते हो, मिथ्या ईद मनाते हो। एक अल्लाह का नाम ही सच्चा है, तुम उसी पर श्रद्धा रखो। स्वर्ग के नाम पर तुम घातक खंजर लहराते हो।

और हिन्दुओं के लिएः-

हिन्दू स्वयं को महान कहते हैं, वे अपनी पानी की सुराही तक नहीं छूने देते परन्तु एक साधारण-सी विनम्रता का प्रदर्शन करने वे चरणों में गिर जाते हैं। यह तुम्हारे हिन्दू हैं।

कबीर मूर्तिपूजा और जातिवाद के विरुद्ध थे और ना ही वे अवतारवाद पर ही विश्वास करते थे। इसके मूल में वे छुआछूत को मानते थे। वे सभी पौराणिक देवताओ के नाम जानते थे, परन्तु उन्हें वे महान् आत्मा नहीं मानते थे। कबीर उनके प्रभामण्डल को केवल किताबी बात मानते थे। या तो अपनी कविताओं में निरन्तर व्यस्त रहने के कारण अथवा उनकी ऐतिहासिक सम्भावनाओं के कारण कबीर ने इन कहानियों पर कोई प्रश्न नहीं किया अथवा ज्ञान विज्ञान के अभाव में, तत्कालीन मान्यताओं एवं संशयवाद के कारण कबीर इन बिन्दुओं पर मौन ही रहे। उनका विशेष बल परमात्मा की उपासना पर ही था, वे राम नाम के मन्त्र का जाप करते थे और अपनी कविता के कुछ पद्यों में वे राम को सत्य कहते थे और अनिवार्य रूप से वे उसी के अभ्यस्त थे। सूर्यवंशीय परम्परा वाले ऐतिहासिक राम को वो अपने आराध्य राम से पृथक् मानते थे। यह बात रामानन्द जी की शिक्षाओं से एकदम भिन्न थी। निश्चित रूप से यह भक्तिमार्ग राम के प्रति आत्म समर्पण था। और यही उनके विश्वास का आधार था।

उनके विचार विलक्षण थे तथा जनसाधारण से अलग थे। उनके विचार महान मनस्वियों जैसे थे। परमात्मा की सृजनशीलता को वे जोरदार शब्दों में अभिव्यक्त करते थे। सृष्टि के निर्माता, नियुक्तिकर्त्ता सर्वज्ञ, व्यवस्थित रूप से सृष्टि के संचालन कर्ता के रूप में कबीर परमात्मा को मानते थे। उनकी स्वयं की पूर्ण रूप से यही भावना थी और चाहते थे कि अन्य भी इन बातों को माने। यदि कोई उनके उद्देश्य की अवहेलना करता तो वे इस बात की चिन्ता नहीं करते थे। वे भक्तों एवं मनस्वियों के मध्य खड़े एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें स्वयं को लेकर अन्य के दृष्टिकोण की कोई चिन्ता नहीं थी तथा उनके द्वारा किया गया विरोध भी उन्हें मान्य नहीं था। घर और राह के मध्य खड़े हुए व्यक्ति थे कबीर। ईश्वर के अस्तित्व को लेकर उनमें भय भी था और अनिश्चय की भावना भी थी। जीवन के उत्कर्ष को लेकर भी उनकी यही भावना थी। कबीर डरते थे कि परमात्मा दण्ड स्वरूप उन्हें पतित न कर दे। जब तक हृदय में प्रेम व श्रद्धा उत्पन्न न हो तब तक यह गूढ़ पहेली ही रहती है। मुस्लिम धर्मावलम्बियों ने ईश्वर और मनुष्य के बीच मोहम्मद साहब को पैगम्बर बना दिया। कबीर व्यक्ति पूजा के विरुद्ध थे और किसी पवित्र स्थान के नाम

से बहुत दूर रहते थे।

कबीर की कविताओं में यह कमी थी कि कभी-कभी वे दु:खी व्यक्तिगत दाम्पत्य जीवन के वियोग को आध्यात्मिकता का जामा पहनाना पसन्द करते थे लेकिन उनके सभी साथियों का दर्शन रेत की तरह शुष्क है जिसमें प्रेम की एक भी बूंद शेष नहीं है। इनके शिष्यों में जो पति हैं वे प्रणय निवेदन एवं हृदय की भावनाओं को लेकर आसक्ति के रूप में सर तक नहीं हिलाते। कबीर की कविताओं में वास्तविकताओं का अभाव है और यही उनकी छवि के अनुरूप है। संभवतया उनकी कविताओं में स्वयं की घर गृहस्थी का दिग्दर्शन है। उनकी स्वयं की पत्नी लोई, जो उनकी आजीवन पूजा करती रही, वह भी इसी कारण दयनीय तथा दु:खद स्थिति में रही। सम्भवतया ये दो विरोधी गुण उनकी कविताओं से प्रकट होते हैं।

कबीर की कविता कोई नकाब (मुखावरण) नहीं है। वे कठोरता पूर्वक किसी को बहकाने से बचते थे और यही कारण था कि कविताओं को रचते समय हृदय से अधिक बुद्धि को महत्त्व देते थे और ध्यानमग्न होने से चूक जाते थे। वे बिना किसी नैतिकता के स्वयं को पति के स्थान पर अपनी पत्नी के पिता के रूप में देखना पसन्द करते थे। यह कार्य ऐसा ही है जैसे किसी लड़की को ऐसे बन्दरगाहों में निपटा दें जहाँ सब शुष्क और अनजान लोग हों, यह काम एक उत्तेजना पैदा करने वाला है अर्थात् उनके हृदय में पत्नि के प्रति जो भावनायें होनी चाहिए वह नहीं थी।

उनके जीवन की एक जोरदार घटना के अन्तर्गत आता है कि आधी रात को तेज बरसात में वे अपनी पत्नी को उसके प्रेमी से मिलाने उसके घर ले गये। यदि यह सत्य है तो यह बात का प्रमाण है कि उनमें अपनी पत्नी के प्रति प्रेम का अभाव था। यदि यह बात एक सन्त का गुण अथवा अवगुण है यह उनकी अपनी मनोगत भावनायें हैं, वैसे यह बात किसी कवि अथवा सामान्य व्यक्ति के समझ के बाहर है। ऐसा क्यों है? यदि इस प्रकार की बात है तो न वो सन्त हैं और न सामान्य गृहस्थ। यह एक साधारण सन्त अथवा साधारण पति के सोच के बाहर की बात है। वे दोनों रूपों में ही असफल हैं। कबीर की कविताओं में पत्नी किसी मृत्यु दूत से कम नहीं है। कबीर, अधिकांश स्थानों पर अपनी कविता में विवाह का वर्णन मृत्यु के रूप में करते हैं। मृत्यु के साथ विवाह की तुलना ऐसी है जैसे डंक मार दिया हो और वे जैसे इस डंक की पीड़ा को बाहर निकालने के स्थान पर विवाह को ही एक दु:खद घटना बताते हैं।

यद्यपि कबीर का व्यक्ति अथवा नीति का सार्वजनिक विरोध उनकी कुंठाओं को दर्शाता है तथापि उनकी ऐसी बातें इतनी बलपूर्वक प्रकट की जाती थी कि वे श्रोताओं के हृदयों में प्रवेश कर जाती थी। उनके कहने का ढंग व अभिव्यक्ति का माध्यम इतना आकर्षक था कि वह निर्विरोध रूप से श्रोताओं के दिलों को छू जाता था। वे किसी भी निर्दोष शब्द को न तो अपने वश में रखते थे और न छुपाते थे। अपनी अभिव्यक्ति में वे साहित्यिक सौन्दर्य की भी परवाह नहीं करते थे। वे उन अनगढ़ पत्थरों के समान हैं जिनको प्रकृति रूपी छेनी गढ़ती है। यदि किसी कुशल सम्पादक द्वारा इनका चयन व प्रकाशन होवे तो वे सच्चे काव्य के हीरे के रूप में हैं।

सभी स्थापित धर्मों का एक ही आधार है जिनके अन्तर्गत बुनियादी शिक्षा परमात्मा से प्रेम करना है। प्रत्येक धर्म व मान्यता पर चारित्रिक पवित्रता का सन्देश सर्वोपरि है। कबीर की कविताओं में जो पद हैं, उनमें दो प्रकार की अनुभूतियाँ हैं। वे विचारों के निर्माता हैं, किसी धर्म, पंथ अथवा सम्प्रदाय के नहीं। वे किसी भी प्रकार की औपचारिकता एवं समारोहों के विरुद्ध थे। यदि इस बात को ध्यान से देखा जाय तो वे ना हिन्दू थे और ना ही मुसलमान। उनकी आन्तरिक विचारधारा पूर्णतया हिन्दुस्तानी थी। उनकी विचारधारा पुराणों से ली गई। कबीर आवगमन (पुनर्जन्म) में विश्वास रखते थे, जिसका उदाहरण निम्न पंक्तियाँ हैं:-

तुम जब तक निर्गुण का नाम जाप न करोगे तो पछताओगे,
इस नगर में तुम्हें अनिवार्य रूप से बारम्बार आना होगा।
पहिले भूत की योनी, फिर सात जिन्दगियों में जाना पड़ेगा।।

एक अन्य कविता में वे कहते हैं:-

मेरी जैसी आत्मा तुम्हें दूसरी बार नहीं मिलेगी।

परन्तु दूसरी पंक्ति में वे जो वर्णन करते हैं उसकी सीमा गलतियों की सम्भावनाओं से परे है-

मानव जीवन प्राप्त करना कठिन है,
यह पुन: नहीं मिलता।

यह कहने का क्या अर्थ है- वास्तव में यह हिन्दू विचारधारा है, यह वर्णन कबीर के अगले पद्य में किया है और यह उसी प्रकार से है जैसा उन्होंने स्वयं के लिए किया है। जहाँ कबीर हिन्दुत्व के बाहरी दिखावे की बात करते हैं वहाँ इस्लाम सम्बन्धी कुछ आवश्यक बातों का विरोध भी करते हैं। वे जन्म से हिन्दू से विवाह करने के भी विरोधी थे तथा पशुबली को भी वे सहन नहीं करते थे।

मुस्लिम पीर व सन्त उनकी नजर में मुर्गे-मुर्गी के तंग दड़बे के समान थे। वे अपनी चाची की पुत्री से विवाह करते हैं। वे अपने पूर्वजों से अपने परिवार का सम्बन्ध बनाते हैं। यह सत्य है कि वे इस प्रकार के कार्यों का

प्रतिकार करते हैं लेकिन हिन्दुत्व के जिस रूप में कबीर जाने जाते हैं उसका सार संक्षेप यही है कि वे प्रचलित सम्प्रदायों की सीमाओं से बाहर थे।

कबीर सच्चे भारतीय सन्त कवि हैं। वे वेद की पुस्तकों का विरोध भी करते हैं और अनिवार्य रूप से वैदिक गीत गाते हैं। और यदि इस्लाम भी अपनी विचारधारा से सम्बन्धित मदरसों से ऊपर उठकर अलग से सोचे तो कबीर का उन्हें सच्चा मुसलमान मानने में कोई विरोध नहीं। एक मुसलमान चाहे जन्म से हो अथवा उसने इस्लाम स्वीकार कर लिया हो, वह भारतीय ही होगा। उसका रहस्यवाद, भारतीय रहस्यवाद ही होगा तथा उसका जीवन लक्ष्य भी भारतीय होना ही होगा तो वह सच्चा आर्य ही कहलायेगा।

ऋषि मेला २०१३

हेतु स्टॉल आवंटन

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष ऋषि मेला ८, ९, १० नवम्बर शुक्र, शनि, रविवार २०१३ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्य जगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की स्टॉलें लगती हैं। प्रति स्टॉल किराया १००० रु. निर्धारित है। जिसकी राशि पहले जमा होगी उस क्रम से स्टॉलों का आवंटन होगा। जिन महानुभावों को जितनी स्टॉलों की आवश्यकता है, उसी अनुरूप राशि बैंक ड्रॉफ्ट द्वारा या नकद जमा करावें।

स्टॉल सुविधा :– कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाईट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**–७.५ × १५ फीट।

ध्यातव्य : –**१.** स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर–उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टेन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक से स्टॉल संख्या, राशि की रसीद दिखाकर प्राप्त करें। बिना अनुमति के पूर्व में स्टॉलों में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें।

ओ३म्

१३०वाँ बलिदान–समारोह

ऋषि–मेला

इस वर्ष प्रतिवर्ष की भाँति ऋषि बलिदान समारोह का समारोह कार्तिक शुक्ला षष्ठी से अष्टमी संवत् २०७० तदनुसार ८, ९, १० नवम्बर, शुक्रवार, शनिवार, रविवार २०१३ को ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में भव्य समारोह के साथ मनाया जा रहा है।

इस अवसर पर ऋग्वेद पारायण यज्ञ गुजरात के प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान् डॉ. कमलेश कुमार शास्त्री के ब्रह्मत्व में सम्पन्न होगा।

इस अवसर पर ऋषि उद्यान में जीर्णोद्धार के पश्चात् बनी भव्य यज्ञशाला का उद्घाटन समारोह भी होगा।

स्वामी दर्शनानन्द बलिदान शताब्दी मनायी जायेगी।

आर्यसमाज के वैदिक विद्वान्, कार्यकर्ता, आर्य पाठविधि की सेवा करने वाले आचार्य, वेदपाठी, ब्रह्मचारियों का सम्मान किया जायेगा।

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष निरन्तर २६ वर्ष से सम्पन्न हो रही वेदगोष्ठी में अनेक विद्वानों के पत्र वाचन होंगे, इस वर्ष वेदगोष्ठी का विषय 'वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास' होगा।

इस समारोह में अधिक से अधिक संख्या में सपरिवार इष्ट मित्रों सहित पधारकर धर्म लाभ उठायें।

मुक्त हस्त से आर्थिक सहयोग कर सभा के कार्यों की अभिवृद्धि में सहयोगी बनें।

।।ओ३म्।।

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में

१३० वाँ ऋषि बलिदान समारोह

महापुरुषों का यज्ञमय जीवन हमको प्रत्येक कदम पर प्रेरणा व मार्गदर्शन देता रहता है। जिस कारण हम उनके ऋणी हो जाते हैं। इस ऋण से मुक्त होने का एक ही उपाय है - महापुरुषों की विचारधारा का यथासामर्थ्य प्रचार-प्रसार। विराट व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३० वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ - ६ नवम्बर से 'ऋग्वेद पारायण यज्ञ' का आरम्भ किया जायेगा, इस यज्ञ की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन १० नवम्बर को होगी। यज्ञ के **ब्रह्मा डॉ. कमलेश कुमार शास्त्री** होंगे। यह यज्ञ ऋषि-उद्यान, अजमेर की यज्ञशाला में होगा।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्ताराष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसंधान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से संपन्न होने वाली वेदगोष्ठी का आयोजन किया गया है। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है-**वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास**। जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे १५ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। ८-९ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता - प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गतवर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। ८ नवम्बर को परीक्षा एवं ९ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय १५ अक्टूबर, २०१३ तक 'आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि-उद्यान, अजमेर' इस पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान-समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

अक्टूबर के आरम्भ में अजमेर में हलकी ठंड होने लगती है, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें।

सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके।

सभी से निवेदन है कि १३० वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान्-आचार्य बलदेव जी, प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु जी-अबोहर, आचार्य विजयपाल जी-झज्जर, पं. शिवदत्त पाण्डे, पं. धीरेन्द्र पाण्डे, स्वामी ऋतस्पति, डॉ. ब्रह्ममुनि जी-महाराष्ट्र, डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी-गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार, डॉ. वेदपाल जी-बड़ौत, आचार्या सूर्या देवी जी-शिवगंज, डॉ. राजेन्द्र जी विद्यालंकार, डॉ. विनय विद्यालंकार, सत्येन्द्रसिंह जी-मेरठ, डॉ. कृष्णपालसिंह जी-जयपुर, धर्मपाल जी-दिल्ली, श्री सत्यानन्द आर्य-दिल्ली, श्री राजवीर-मुरादाबाद, श्री जगदीश शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव आर्य-राजकोट, श्री प्रकाश आर्य-महू, विनय जी-दिल्ली, श्री सत्यपाल पथिक, पं. भूपेन्द्र सिंह जी आदि

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अंतर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

गजानन्द आर्य	**धर्मवीर**	**ओम मुनि वानप्रस्थ**
प्रधान	**कार्यकारी प्रधान**	**मंत्री**

ईमेल व वेबसाईट-email : psabhaa@gmail.com, www.paropkarinisabha.com

कार्यक्रम

शुक्रवार, दिनांक ८ नवम्बर, २०१३

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा – डॉ. कमलेश कुमार शास्त्री

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **ध्वजारोहण व उद्घाटन सत्र**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन, विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **स्वामी दर्शनानन्द शताब्दी समारोह, भजन–प्रवचन–सम्मान**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ, सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **महर्षि दयानन्द–एक विलक्षण व्यक्तित्व, भजन–प्रवचन–सम्मान**

शनिवार, दिनांक ९ नवम्बर, २०१३

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा – डॉ. कमलेश कुमार शास्त्री

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **धर्मान्तरण–राष्ट्र के लिए घातक, भजन–प्रवचन–सम्मान**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **वर्तमान में आर्यसमाज की भूमिका, भजन–प्रवचन–सम्मान**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **म.द. आर्ष गुरुकुल–स्नातक सत्र, भजन–प्रवचन–सम्मान**

रविवार, दिनांक १० नवम्बर, २०१३

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.३० तक – यज्ञ, वेदपाठ, **पूर्णाहुति**, ब्रह्मा– डॉ. कमलेश कुमार शास्त्री

०९.३० से १०.०० तक – वेद प्रवचन

१०.०० से १०.३० तक – प्रातराश

१०.३० से १२.३० तक – **भजन–प्रवचन–सम्मान**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **आर्य युवक सम्मेलन, भजन एवं प्रवचन**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **धन्यवाद व समापन सत्र**

वेद–गोष्ठी

विषय : **वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास**

स्थान : **ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर**

८ नवम्बर : उद्घाटन सत्र – ११.०० से १२.३० तक

: द्वितीय सत्र – १४.३० से १७.०० तक

९ नवम्बर : तृतीय सत्र – १०.०० से १२.३० तक

: चतुर्थ सत्र – १४.३० से १७.०० तक

१० नवम्बर : समापन सत्र

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता
(१६ से ३० सितम्बर २०१३ तक)

१. रजनीश कपूर, नई दिल्ली, २. रंजन हांडा, नई दिल्ली ३. अवनीश कपूर, नई दिल्ली, ४. वासुदेव आर्य, अजमेर, ५. केशव राव, नागपुर, ६. शशी बाली, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता
(०१ से १५ सितम्बर २०१३ तक)

१. राजेन्द्र कुमार सिंहल, अजमेर २. आनन्द शर्मा, अजमेर, ३. ओमप्रकाश एवं सुशीला पारीक, अहमदाबाद, ४. सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव, अजमेर। **-परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

सत्यार्थप्रकाश प्रचार निधि
(०१ जून से ३० सितम्बर २०१३ तक)

१. विमल शास्त्री, जोधपुर २. कनवेरजीत भारद्वाज, हिसार, हरियाणा, ३. मास्टर कंवर सिंह दहिया, सोनीपत, हरियाणा, ४. मदनलाल आर्य, पंजाब, ५. आचार्य नरेन्द्र, नारनौल, हरियाणा, ६. डॉ. आर.सी. रॉय, लखनऊ, उ.प्र., ७. आर्यसमाज परिवार कांसा, छत्तीसगढ़, ८. आर.आर. नागर, ऊधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, ९. माता प्रेमवती आर्या, अजमेर १०. सुभाष एकनाथ वेदपाठक, औरंगाबाद महाराष्ट्र, ११. महेन्द्रकुमार, अम्बेड़कर नगर, १२. राजेन्द्र वीर आर्य, भोपाल, १३. शिवराम आर्य, जोधपुर १४. कृष्ण आर्य, देवास म.प्र., १५. प्रधान द्वारा शशी, गुड़गाँव, १६. राजीव यादव, बीकानेर, १७. आर्यसमाज बिजयनगर, अजमेर, १८. शिवरतन ओझा, चम्पारन बिहार, १९. सुशीला देवी झा, नई दिल्ली, २०. अमरनाथ गुप्त, सिकन्दराबाद, २१. दलराजसिंह धाकड़, जयपुर, २२. रामपत आर्य, हरियाणा, २३. सुदर्शन ताप्सी, हरिद्वार, २४. सावित्री भंवरलाल आर्य, जोधपुर, २५. बलराज, देहरादून, २६. चोगामल चौधरी चेरिटेबल ट्रस्ट, इन्दौर, २७. सत्यदेव, हनुमानगढ़, २८. जगदीश प्रसाद, भरतपुर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

स्वामी दर्शनानन्द बलिदान शताब्दी-वर्ष-व्याख्यान

आर्यसमाज मयूर विहार, फेज-प्रथम, पॉकेट चतुर्थ में स्वामी दर्शनानन्द शताब्दी कार्यक्रम सफलता पूर्वक आयोजित किया गया। इस अवसर पर स्वामी दर्शनानन्द निर्वाण शताब्दी व्याख्यान का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। आर्यसमाज की ओर से इस उद्देश्य के लिए अबोहर (पंजाब) से माननीय प्रा. राजेन्द्र जी जिज्ञासु एवं मेरठ से श्री सत्येन्द्र सिंह आर्य को आमन्त्रित किया हुआ था। दोनों विद्वान् उपस्थित थे। श्रद्धेय जिज्ञासु जी ने स्वामी दर्शनानन्द जी के त्याग, तप, विद्या एवं शास्त्रार्थ-कौशल से अपनी बात आरम्भ की। ईस्वी सन् १८६१ में जगरावाँ (पंजाब) में जन्मे स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी आर्यसमाज की पहली पीढ़ी के विद्वान् थे। सन् १९०१ में स्वामी अनुभवानन्द जी से संन्यास की दीक्षा लेकर स्वामी दर्शनानन्द नाम पाने के पूर्व १७-१८ वर्ष की आयु में गृह-त्याग कर स्वामी नित्यानन्द के रूप में कादियाँ एवं दीनानगर (गुरदासपुर) के उनके भ्रमण की ऐतिहासिक घटना का 'जिज्ञासु' जी ने यथातथ्य वर्णन किया। ऋषि दयानन्द सरस्वती जी के व्याख्यान सुनकर पं. कृपाराम (स्वामी दर्शनानन्द का पूर्व नाम) जी पर वेद की विचारधारा का रंग ऐसा चढ़ा कि फिर जीवन भर उन पर उसी के प्रचार-प्रसार की धुन सवार रही। लगभग ३६-३७ वर्ष तक आप उपनिषदों के भाष्य, दर्शनों के भाष्य ट्रैक्ट लिखने, पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन और शास्त्रार्थ करने के कार्य में ही लगे रहे। आर्ष ग्रन्थों के वे प्रथम प्रकाशक थे। वैदिक साहित्य के प्रकाशन के महत्त्व की चर्चा करते हुए श्री जिज्ञासु जी ने मैसर्स गोविन्दराम हासानन्द के कार्य की भी बहुत प्रशंसा की। वर्तमान समय में ये राष्ट्रीय स्तर के ऐसे प्रकाशक हैं जो वैदिक वाङ्मय के ग्रन्थों की विश्व भर में आपूर्ति कर रहे हैं। इस विषय में उन्होंने एक घटना का उल्लेख किया कि ''अकस्मात एक दिन एक व्यक्ति का मुझे (जिज्ञासु जी को) फोन आया। उस व्यक्ति की आवाज मैं पहचान नहीं पाया तो पूछा कि आप कौन बोल रहे हैं। उस व्यक्ति ने कहा कि बंगा (पंजाब) से मैं डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा बोल रहा हूँ। मैंने (जिज्ञासु) कहा कि क्या आप वही सुरेन्द्र कुमार शर्मा हो जो हिन्दुओं के विरुद्ध जमायने इस्लामी की पत्रिका 'कान्ति' में लिखते रहते हो। उस व्यक्ति ने कहा कि अब मैंने उस प्रकार के हिन्दुओं के विरुद्ध लेख लिखने बन्द किये हैं। उस व्यक्ति ने कहा कि आपकी पुस्तक 'कुरान वेद की छाँव में' तथा 'कुरान सत्यार्थप्रकाश के आलोक में' पढ़ने के बाद मेरा मन बदल गया और मैंने हिन्दुओं के विरुद्ध लिखना बन्द कर दिया। मैंने पूछा कि आपको ये दोनों पुस्तकें कहाँ से प्राप्त हुई। उसने कहा कि मैंने मैसर्स विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क दिल्ली से मंगायी थी।'' इस प्रकार की महती सेवा इन प्रकाशकों ने की है। इस उदाहरण के द्वारा प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने प्रवचन, शास्त्रार्थ और वैदिक साहित्य के प्रकाशन का महत्त्व दर्शाते हुए स्वामी दर्शनानन्द द्वारा आर्यसमाज के लिए किये गये विस्तृत कार्यों का ब्यौरा श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत किया।

इनके पश्चात् श्री सत्येन्द्र सिंह आर्य ने अपने व्याख्यान में स्वामी दर्शनानन्द जी द्वारा किए गए कुछ विशेष कार्यों पर प्रकाश डाला। स्वामी जी विद्या-व्यसनी थे। आजाद नित्यानन्द नाम के प्रथम संन्यास से घर वापस आने पर जगरावाँ में अपने निवास पर एक संस्कृत पाठशाला खोली। पितामह श्री पं. दौलतराम जी के स्वर्गवास के पश्चात् काशी की उनकी सम्पत्ति और 'क्षेत्र' (अन्नक्षेत्र) आदि दान-पुण्य के कार्यों की व्यवस्था के लिए कृपराम को कार्य सम्भालने के लिए कहा गया। पिता की आज्ञा पर उन्हें वहाँ अपना पूरा गृहस्थ साथ रखना पड़ा। उस समय आर्य सामाजिक विद्यार्थियों को काशी के पण्डित पढ़ाते नहीं थे। उनके खाने-पीने रहने की कोई व्यवस्था नहीं थी। आर्य विद्यार्थी आत्मगोपन करके रहते थे या मारे-मारे फिरते थे। इस परेशानी को दूर करने के लिए ही पं. कृपाराम ने अपनी पृथक् पाठशाला खोली थी। अनेक आर्य विद्वानों ने विद्यार्थी दशा में उक्त पाठशाला से सहायता और शिक्षा पाई। आचार्य पं. श्री गंगादत्त जी, पं. भीमसेन जी, पं. नारायण दत्त जी सिद्ध व श्री पं. काशीनाथ जी मुख्य थे। वर्तमान गुरुकुल प्रणाली के संस्थापक आचार्य यहाँ पर ही तैयार हुए।

विद्यार्थियों को पुस्तकें भी कम मूल्य पर उपलब्ध कराने की पं. कृपाराम जी ने ठान ली। काशी में आपने चैत्र मास में संवत् १९४५ विक्रमी को आसन जमाया था। प्रकाशन का कार्य स्वयं करने के लिए आपने बांकीपुर (पटना) बिहार जाकर वहाँ से ''दि इण्डियन ट्रेड एडवरटाइजर'' प्रेस खरीद लिया और इसी को १० दिसम्बर सन् १८८९ ई. में बनारस ले आए। इसी प्रेस को नामकरण 'तिमिरनाशक' मुद्रणालय हुआ। यहीं ''तिमिरनाशक साप्ताहिक'' पत्र भी प्रकाशित हुआ। उस समय लाजरस प्रेस काशिका (व्याकरण की पुस्तक) रुपये १५/- में तथा महाभाष्य रुपये ३०/- में बेच रहा था। पं. कृपाराम जी ने

यही ग्रन्थ अपने यहाँ छापकर काशिका तीन रुपये में और महाभाष्य दस रुपये में उपलब्ध करा दिया। किसी विद्यार्थी पर यदि पूरा मूल्य नहीं भी हुआ तो जितने रुपये हुए उतने में ही ग्रन्थ दे दिये। बहुतों को मुफ्त भी दिये। लाजरस प्रेस का मालिक यूरोपियन था। उसने पं. कृपाराम जी पर मुकदमा कर दिया। परन्तु मुकदमा पण्डित जी जीत गए और लाजरस प्रैस को भी पुस्तकों का मूल्य कम करना पड़ा। पं. कृपाराम जी ने ६ उपनिषदों, दर्शनों का भाष्य किया एवं ट्रैक्ट लेखन के काम में तो आप और मास्टर लक्ष्मण के अग्रणी थे ही। पण्डित कृपाराम जी ने अपने हिस्से की सारी सम्पत्ति इन्हीं कामों में काशी में रहते हुए ही खर्च कर दी। वेद की विचारधारा और संस्कृत के प्रचार में ही सर्वस्व समर्पित कर दिया।

पण्डित जी ने गुरुकुलों की स्थापना का बेहद महत्त्वपूर्ण कार्य किया। एक दो गुरुकुल ही नहीं खोले, पाँच गुरुकुल स्थापित किये। गुरुकुल सिकन्दराबाद (जि. बुलन्दशहर) गुरुकुल बदायूँ, गुरुकुल विरालसी, गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर और गुरुकुल चोहाभक्ताँ (पोठोहार) जि. रावलपिण्डी। गुरुकुलों की शिक्षा के प्रताप से ही आर्यसमाज को श्री पं. उदयवीर शास्त्री, पं. रामचन्द्र देहलवी, पं. प्रकाशवीर शास्त्री, पं. ओमप्रकाश शास्त्री (विद्याभास्कर) आदि आर्य रत्न मिले। गुरुकुलों से विद्या और तपरूपी पूंजी लेकर जो आर्य विद्वान् सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के कार्य क्षेत्र में उतरे उनको देखकर प्रसिद्ध मनीषी, भारत रत्न डॉ. भगवानदास ने अपनी पुस्तक ''मानव धर्म सार'' में उत्तम शिक्षा की विशेषताएँ बताते हुए लिखा- ''बुद्धि, स्वभाव और शरीर- ये तीन तथा ज्ञान, इच्छा और कर्म- ये तीनों भी जिससे उत्तम और दृढ़ बनें, जिससे सत्व, रज और तम के अंश परिमार्जित हों, वही उचित शिक्षा है। इस प्रकार की उचित शिक्षा का देना गुरुकुल में ही सम्भव है। विद्या उत्तम संस्कार डालने वाली भी हो और धनोपार्जन में सहायता देने वाली भी हो।'' आर्यसमाज के तपस्वियों, विद्वानों द्वारा स्थापित गुरुकुलों की शिक्षा की प्रशंसा आर्योत्तर मनीषियों ने भी की है।

पं. कृपाराम जी ने ईस्वी सन् १९०१ में स्वामी अनुभवानन्द जी से संन्यास की दीक्षा लेकर स्वामी दर्शनानन्द नाम पाया। स्वामी मनीषानन्द से दर्शनों की चर्चाएँ सुन-सुनकर बहु श्रुत हुए और षड्दर्शनों के मन्थनकर्ता बने। काशी के तत्कालीन शिखरस्थ पण्डित शिवकुमार जी को शास्त्रार्थ में पराजित किया। ईसाई एवं इस्लाम मत के विद्वानों को कहाँ-कहाँ कितनी बार हराया, यह गणना करना सम्भव नहीं है। स्वामी जी महान तार्किक एवं शास्त्रार्थ समर के अजेय योद्धा थे। पादरी ज्वालासिंह से कई बार शास्त्रार्थ हुआ और प्रत्येक बार पादरी को निरुत्तर होना पड़ा।

जीवन के अन्तिम समय में स्वामी जी हाथरस में थे। रुग्ण थे। उन्हीं दिनों आर्यसमाज हाथरस का प्रथम वार्षिकोत्सव था। आर्यसमाज के शीर्ष विद्वान् श्री पं. तुलसीराम जी स्वामी, पं. घासीराम जी उत्सव पर आए हुए थे। स्वामी जी के शरीर की अवस्था बहुत दुर्बल थी। परन्तु रोग की गम्भीरता का ध्यान न करते हुए स्वामी जी ने आग्रह किया कि उन्हें शय्या पर ही उत्सव के पण्डाल में ले जाया जावे। उनकी बात सबको माननी पड़ी। उन्हें शय्या पर ही पण्डाल में लाया गया। अब चोला छोड़ने में कुछ ही समय शेष था। आप कठिनता से ही बोल पाये। ''जिस किसी को भी शास्त्रार्थ करना हो कर ले। फिर न कहना।''

शास्त्रार्थ करने के लिए तो भला किसने सामने आना था। इस प्रकार विजय श्री का वरण करते हुए आपका महाप्रयाण हुआ। गुरुकुलों के आदि स्रोत, आर्ष ग्रन्थों के प्रथम प्रकाशक, निर्धन विद्यार्थियों के आश्रय दाता, वैदिक पाठशालाओं के संचालनकर्ता, दर्शनों, उपनिषदों के भाष्यकार काशी के शिखरस्थ पण्डितों के विजेता स्वामी दर्शनानन्द जी को विनम्र श्रद्धांजली देते हुए श्री सत्येन्द्र सिंह आर्य ने अपना वक्तव्य समाप्त किया।

कार्यक्रम के अवसर पर ही प्रा. राजेन्द्र जी जिज्ञासु लिखित एवं विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द द्वारा प्रकाशित ''स्वामी दर्शनानन्द-जीवन चरित'' का भी विमोचन हुआ।

- मन्त्री, आर्यसमाज, मयूर विहार फेज-१, दिल्ली

जैसे विद्वान् लोग ईश्वर की सृष्टि में विद्या से पदार्थों की परीक्षा करके कार्य्यों में उपयोग कर सुखों को प्राप्त करते हैं वैसे ही सब मनुष्यों को इस यज्ञ का अनुष्ठान कर सब सुखों को पहुँचना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२२

जब जर्मनी ईसााई राष्ट्र है, तो क्या भारत हिन्दू राष्ट्र है?
(अपनी स्वयं की जड़ की अस्वीकृति)

- मारिया विर्थ

यह वह विचार है, जिसके महत्त्व को जाँचा जाना है, यद्यपि मैं यह कहने में जल्दी करती हूँ कि यह कोई नहीं कहता है कि भारत को स्वयं को धर्मशासित राज्य घोषित करना चाहिए। धर्म व्यक्तिगत रुचि का मामला है और ऐसा रहना चाहिए। केवल हमें धर्मनिरपेक्षता की रक्षा और राजनीतिक रूप से सही होने के उद्देश्य से धर्मनिरपेक्षता के अनुसरण में अपने विश्वासों, संस्कृति और परम्पराओं को अवमानित नहीं करना चाहिए।

यद्यपि मैं भारत में लम्बे समय से रहती हूँ, मैं अब भी कुछ बिन्दुओं को नहीं समझ पा रही हूँ- उदाहरण के लिए क्यों अनेक शिक्षित भारतीय उत्तेजित हो जाते हैं, जब भारत को हिन्दू देश माना जाता है। बहुसंख्यक भारतीय हिन्दू हैं। भारत अपनी प्राचीन हिन्दू परम्परा के लिए विशेष है। इसी के कारण पश्चिम के लोग भारत की ओर आकर्षित होते हैं। तब अपने देश के हिन्दू मूल को स्वीकार करने का अनेक भारतीयों द्वारा प्रतिरोध क्यों किया जाता है?

यह प्रवृत्ति दो कारणों से विचित्र है। पहला, उन शिक्षित भारतीयों को केवल 'हिन्दू' भारत से समस्या है, लेकिन 'मुस्लिम' या 'ईसाई' देशों से नहीं। उदाहरण के लिए जर्मनी में केवल ५९ प्रतिशत आबादी दो बड़े ईसाई चर्चों (प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक) के साथ पंजीकृत है, तथापि देश 'ईसाई देशों' के समूह है। चांसलर अंजेला मरकेल ने हाल ही में जर्मनी की ईसाईयत की जड़ों पर जोर दिया है और लोगों से 'ईसाई मूल्यों की ओर वापस जाने' का अनुरोध किया है। २०१२ में उन्होंने जर्मन कैथोलिक दिवस को सम्बोधित करने के लिए जी-८ सम्मेलन की अपनी यात्रा को स्थगित कर दिया। अंजेला मारकेल की सत्तारूढ़ दल सहित दो प्रमुख राजनीतिक दलों ने अपने नाम में 'ईसाई' शब्द डाले हैं।

जर्मन क्रोधित नहीं होते हैं, यदि जर्मनी को ईसाई देश कहा जाता है, यद्यपि मैं वस्तुत: समझती हूँ कि वे हैं। यद्यपि चर्च का इतिहास भयावह है। ईसाईयत की तथाकथित सफलता की कहानी पर्याप्त रूप से निरंकुशता पर आधारित थी। ''धर्म परिवर्तन करो या मरो'' वह विकल्प था, जो पाँच सौ वर्ष पहले अमेरिका में स्वदेशी आबादी को दिया गया था। जर्मनी में भी १२०० वर्ष पहले सम्राट कार्ल महान् ने अपने नव विजित क्षेत्र में बपतिस्मा से मनाही के लिए मृत्यु दण्ड देने का आदेश दिया था। इसने उनके सलाहकार अल्कुईन को यह टिप्पणी करने के लिए उत्तेजित किया: 'कोई उन्हें बपतिस्मा के लिए बाध्य कर सकता है, लेकिन उन्हें विश्वास करने के लिए कैसे बाध्य किया जाए?'

वे दिन, जब किसी की जिंदगी खतरे में पड़ सकती थी, यदि कोई चर्च के धर्म सिद्धान्त से सहमत नहीं होता, अब समाप्त हो गए हैं। अब पश्चिम में अनेक चर्च से सहमत नहीं होते हैं और उसे शान्ति से छोड़ देते हैं- कुछ तो इसलिए क्योंकि वे चर्च के अधिकारियों के कम धार्मिक व्यवहार से विरक्त हो जाते हैं और बाकी इसलिए क्योंकि वे धर्म सिद्धान्त में विश्वास नहीं करते हैं, उदाहरण के लिए कि 'ईसा एक मात्र मार्ग है' और ईश्वर केवल उन सबको भेजते हैं, जो इसे नर्क नहीं स्वीकार करता है।

और यहाँ दूसरा कारण आता है कि क्यों भारतीयों द्वारा हिन्दुत्व के साथ भारत के साहचर्य के प्रतिरोध को समझना कठिन है। हिन्दुत्व अब्राहमी धर्म से भिन्न श्रेणी में है। ईसाईयत और इस्लाम की तुलना में इसका इतिहास नि:सन्देह कम उग्र था, क्योंकि यह प्राचीन समय में विश्वासोत्पादक तर्कों द्वारा फैला न कि बल से। यह ऐसी विश्वास प्रणाली नहीं है, जो धर्म सिद्धान्त में अंधविश्वास और किसी की बुद्धिमत्ता के रोक की मांग करता है। इसके विपरीत हिन्दुत्व संचालन के लिए अपनी बुद्धिमत्ता के उपयोग को प्रोत्साहित करता है। यह परिष्कृत चरित्र और बुद्धि (विधियाँ दी गई हैं) पर आधारित सच्चाई की खोज है। इसमें न केवल धर्म और दर्शन के बारे में वरन् संगीत, वास्तुकला, नृत्य, विज्ञान, खगोल विज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि के बारे में प्राचीन साहित्य का बड़ा भण्डार है।

यदि जर्मनी या किसी अन्य पश्चिमी देश के पास इस तरह का साहित्यिक खजाना होता, तो यह अत्यधिक गौरवशाली होता और अपनी महत्ता को हर अवसर पर उजागर करता। जब मैंने उदाहरण के लिए उपनिषद् को देखा, मैं भौचक्की रह गयी। यहाँ स्पष्ट भाषा में व्यक्त था जिसे मैं सहज रूप से सही होने का अनुभव किया, लेकिन इसे साफ-साफ स्पष्ट नहीं कर सका। ब्राह्मण आंशिक नहीं है, यह हर कुछ में अदृश्य है, अविभाज्य भाव है। हर

कोई अंतिम सत्य का पता लगाने का बार-बार अवसर प्राप्त करता है और इसका अनुसरण करते हुए अपना रास्ता चुनने के लिए स्वतन्त्र है। सहायक संकेत दिए गए हैं, लेकिन थोपे नहीं गए हैं।

भारत के अपने प्रारम्भिक दिनों में मैं सोचती थी कि हर भारतीय अपनी परम्परा को जानता है और इसको महत्त्व देता है- धीरे-धीरे मैंने महसूस किया कि मैं गलत थी। ब्रिटिश कॉलोनी काल के मालिक अपनी प्राचीन परम्परा से अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तियों को अलग करने ही नहीं वरन् उनके द्वारा इसकी अवज्ञा करवाने में सफल रहे। ऐसा हुआ कि 'शिक्षित' वर्ग ने मूल संस्कृत पाठों को नहीं पढ़ा और ब्रिटिश ने उन्हें जो कहा, उस पर विश्वास कर लिया। ज्ञान की यह कमी और ब्रिटिश शिक्षा द्वारा बलात् मत परिवर्तन वह कारण हो सकता है कि क्यों अनेक 'आधुनिक' भारतीय 'हिन्दू' के खिलाफ हैं। वे पश्चिमी धर्मों, जिस पर आँख मून्दकर विश्वास किया जाना है (या इसे कम से कम घोषित किया गया) और जो यदि अपने अनुयायी को स्वयं ही सोचने से मनाही नहीं तो हतोत्साहित करता है और बहु-स्तरीय हिन्दू धर्म स्वतन्त्रता देता है और अपनी बुद्धि के इस्तेमाल के लिए प्रोत्साहित करता है।

अनेक शिक्षित वर्ग यह अनुभव नहीं करते हैं कि एक ओर पश्चिमी लोगों, विशेषकर वे जो इस विशाल देश में अपना धर्म लागू करने का सपना देखते थे, ने हिन्दू धर्म की अवमानना करने के लिए उनकी प्रशंसा की, क्योंकि इसने पश्चिमी विश्ववाद को भारत में फैलाने में सहायता की। दूसरी ओर चर्च के लोग सहित अनेक पश्चिमी लोग, अच्छी तरह मूल्य को समझते थे और उन्होंने चोरी-छिपे विशाल भारतीय ज्ञान प्रणाली से उपयुक्त अन्तर्ज्ञान को ले लिया, मूल स्रोत को पीछे छोड़ दिया और इसे इस तरह प्रस्तुत किया मानो यह अन्तर्ज्ञान का ज्ञान पश्चिम को पहले से था।

इन्फिनिटी फाउंडेशन के राजीव मल्होत्रा ने इस क्षेत्र में कठिन अनुसन्धान किया है और पश्चिमी विश्ववाद में धर्म सभ्यता के "पीजाने" के अनेक मामलों को प्रलेखित किया है। उसने शब्द आत्मसातकरण को चुना, क्योंकि इसका अर्थ है कि जिसे पीया गया (उदाहरण के लिए एक हिरण) अन्त में नहीं रहता, जबकि पीने वाला (एक बाघ) मजबूत हो जाता है। इसी तरह हिन्दू सभ्यता धीरे-धीरे अपने मूल्यवान, एकमात्र परिसम्पति को खो रही है और जो बच जाता है, वह घटिया कहा जाता है।

यदि केवल मिशनरियाँ हिन्दू धर्म को अवमानित करती, तो वह इतना बुरा नहीं होता, क्योंकि उनके पास स्पष्ट एजेंडा था, जिसे विवेकी भारतीयों को भांप लेना चाहिए था। लेकिन दु:ख की बात है कि हिन्दू नाम के साथ भारतीयों ने उनकी सहायता की, क्योंकि वे गलती से विश्वास किए कि हिन्दुत्व पश्चिमी धर्मों से घटिया है। वे पूरी जानकारी प्राप्त करने के बजाय हर हिन्दू को तुच्छ समझने लगे। नियमत: वे अपनी परम्परा के बारे में कुछ नहीं जानते थे, इसके अलावा कि ब्रिटिश ने उन्हें जो कहा अर्थात् यह कि हिन्दू जाति की प्रमुख विशेषता जाति प्रथा और मूर्ति पूजा है। वे यह अनुभव नहीं कर सके कि भारत लाभान्वित होगा न कि इसे घाटा होगा, यदि यह गहन और सबसे अलग हिन्दू परम्परा का अनुसरण करेगा। कुछ समय पूर्व परम पावन दलाई लामा ने कहा कि ल्हासा में एक युवा के रूप में वह पहले भारतीय विचारधारा की सम्पन्नता से अत्यधिक प्रभावित थे, भारत के पास दुनिया को मदद करने की बहुत क्षमता है। पश्चिमीकृत भारतीय सम्भ्रान्त व्यक्ति इसे कब अनुभव करेंगे?

हिन्दू विश्व पत्रिका से साभार।

नया-सवेरा

-देवेन्द्रार्य

भ्रष्टाचार का नाश होगा,
हमारे देश का उद्धार होगा।
गरीबों का विकास होगा,
गरीबी का विनाश होगा।। १।।

गलत नीतियों का नाश होगा,
श्रेष्ठ नीतियों का प्रचार-प्रसार होगा।
लोगों का चौमुखी विकास होगा,
खुशहाल देश का किसान होगा।। २।।

देश कभी न गुलाम होगा,
भक्ति-भाव का संचार होगा।।
घर-घर वेद का प्रचार होगा,
काली करतूतों का पर्दा-फाश होगा।। ३।।

सबके पास रोटी, कपड़ा और मकान होगा,
सबके हृदय में शान्ति का स्थान होगा।
स्वामी दयानन्द जी का सपना साकार होगा,
सारे विश्व में स्वामी दयानन्द का सपना साकार होगा।। ४।।

-आर्ष महाविद्यालय, गुरुकुल
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, गेट नं. ३, हरियाणा

गुरु का वरण

- प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया,
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः।।

भारतवर्ष की महिमामयी संस्कृति में, ऋषियों की परम्परा में तीन गुरु माने जाते हैं, ''शतपथ ब्राह्मण'' में कहा गया है, ''मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद'' मनुष्य का प्रथम गुरु माता होता है, द्वितीय गुरु पिता है और तृतीय गुरु आचार्य हैं। माता-पिता का चुनाव सन्तान के वश में नहीं होता है, सन्तान का चुनाव भी माता-पिता के वश में नहीं होता। किस माता-पिता को कौन-सी सन्तान मिलेगी और किस सन्तान को कौन-से माता-पिता मिलेंगे, यह परम प्रभु परमेश्वर की व्यवस्था से जीवों के कर्मानुसार होता है। संसार में बिना गुरु के, गुरु-विहीन व्यक्ति तो होते हैं किन्तु बिना माता-पिता के कोई प्राणधारी नहीं होता। अतः मातृमान् और पितृमान् का ऋषियों ने अर्थ बताया है कि वस्तुतः वह सन्तान वास्तव में माता-पिता वाली है जिसके माता-पिता धार्मिक, विद्वान् और मानवता के प्रशंसनीय गुणों से युक्त हों, सो माता-पिता का वरण नहीं किया जाता, वे जीव के कर्मानुसार परमेश्वर की व्यवस्था से प्राप्त होते हैं।

गुरु या आचार्य का चयन या वरण किया जाता है। शिष्य का भी वरण या चयन किया जाता है। न सभी को गुरु बनाया जाता है और न सभी को शिष्य बनाया जाता है। वेद में एक मन्त्र आता है जिसमें गुरु आचार्य के गुणों की व्याख्या है-

सं पूषन् विदुषा नय यो अञ्जसानुशासति।
य एवेदमिति ब्रवत्

ऋग्. ६-५४-१

इस मन्त्र में विद्यार्थी पूषन् परमेश्वर से प्रार्थना करता है, उषादेव पुष्टिदाता परमेश्वर है। पोषण शरीर का तो होता ही है, मन, बुद्धि और चित्त का भी होता है। सामाजिक समरसता, सामंजस्य का भी होता है। गुरुदेव तो मन, मस्तिष्क, बुद्धि, चित्त, चरित्र, आचरण, सबका पोषण करने वाले होते हैं। अतः मन्त्र में यह भाव है कि गुरुदेव के पास विद्या की प्राप्ति के लिए, ज्ञान की उपलब्धि के लिये हमारे शरीर, अन्नमय कोष, प्राणमय कोष और मनोमय कोष का सब प्रकार से पोषण होता रहे, मन्त्र में परमेश्वर से प्रार्थना यह की गई है कि हे पूषन् देव! हमें ऐसे विद्वान् गुरु के पास पहुँचाइए जो-

यः अञ्जसा अनुशासति (अनुशास्ति)

जिसकी अध्यापन करने की विधि में सरलता, शीघ्रता हो, शिष्य सरलता से हृदयंगम कर सकें, कई व्यक्ति स्वयं तो विद्वान् हैं, किन्तु उनमें शिष्यों द्वारा ग्राह्य अध्यापन कला नहीं होती। अध्यापन में संप्रेषणीयता, ज्ञान-दान की कला होनी चाहिए।

मन्त्र का तीसरा खण्ड है-

य एवेदमिति ब्रवत्।

इसका अभिप्राय यह है कि अध्यापक को यह निश्चयात्मक ज्ञान हो कि यह विषय, ज्ञान इतना ही है। ज्ञान का प्रथम पक्ष है सिद्धान्त और दूसरा पक्ष व्यवहार और प्रयोग। विषय का सैद्धान्तिक ज्ञान अधूरा है जब तक उसका जीवन में प्रयोग, व्यवहार न समझ में आ जाये। विद्या की वास्तविक उपयोगिता व्यवहार और प्रयोग ही है।

मन्त्र का एक बहुत महत्त्वपूर्ण अंश है कि ''हे पूषन् देव, पोषण करने वाले प्रभु, हमें विदुषा नय, हमें विद्वान्, सुविज्ञ गुरु के पास पहुँचाइए। विद्या का अदान-प्रदान तभी सम्भव हो सकेगा जब गुरु और शिष्य एकत्र, एक जगह इकट्ठे हों, गुरु शिष्य के एकत्र होने की दो विधियाँ समझ में आती हैं- एक है कि शिष्य गुरु के चरणों में श्रद्धा-पूर्वक स्वयं उपस्थित हो। गीता में श्री कृष्ण कहते हैं ''**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्, तत्परः संयतेन्द्रियः**'' (गीता ४-३९) इसका अभिप्राय यह है कि ज्ञान प्राप्त करने के लिए तीन आवश्यक शर्तें हैं। पहली शर्त यह है कि शिष्य में श्रद्धा हो, विद्या प्राप्ति के प्रति श्रद्धा हो और गुरु के ज्ञान, जीवन और चरित्र के प्रति श्रद्धा हो। दूसरी शर्त यह है कि शिष्य विद्या प्राप्ति में तत्पर हो, शिष्य के जीवन का उद्देश्य विद्या-प्राप्ति हो। ज्ञान-प्राप्ति की तीसरी शर्त है कि विद्यार्थी के जीवन में भोग-विलास के प्रति संयम हो, शिष्य विलासी न हो और तपस्वी हो। साथ ही हमारे जीवन में भोग-इन्द्रियों पर नियन्त्रण हो। हम जिह्वा से स्वाद का भोग करते हैं। शिष्य भोगी-विलासी न हो, जीवन में संयमी हो, तभी ज्ञान प्राप्त कर सकेगा। शिष्य को सुपात्र, श्रद्धावान् और संयमी होना आवश्यक है। एक बड़ी प्रसिद्ध कहावत है-

फूलहिं फलहिं न बेंत, जदपि सुधा बरसहिं जल्द।
मूरख हृदय न चेत, जौ गुरु मिलै बिरंची सम।

गीता में कहा गया है-

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः।

(गीता ४-३४)

अर्थात् तत्वदर्शी गुरु लोग ज्ञान का उपदेश देंगे और

अध्यापन कला में निपुण गुरु लोग शिष्य के हृदय में ज्ञान को पहुँचा भी देंगे किन्तु शिष्य के लिए आवश्यक है-

तं विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया

(गीता ४-३९)

अर्थात् शिष्य को उचित है कि वह गुरु के प्रति श्रद्धापूर्वक प्रणाम अर्पित करे, फिर बड़ी नम्रता से गुरु से प्रश्न भी करे, अपनी जिज्ञासाओं का समाधान करवा ले और साथ ही गुरु के प्रति शुश्रुषा (श्रोतुमिच्छा) की भावना बनाये रखे।

हमने ऊपर यह लिखा था कि गुरु शिष्य के मिलन के, एकत्र होने के दो प्रकार हैं। अब तक हम प्रथम प्रकार की चर्चा कर रहे थे कि शिष्य गुरु के चरणों में श्रद्धा-पूर्वक उपस्थित हों। गुरु शिष्य के मिलन का दूसरा प्रकार है कि गुरु शिष्य के पास पढ़ाने के लिए जाये, यह **ट्यूशन** पद्धति है। आजकल तो ट्यूशन बहुत प्रचलित हो गया है। अध्यापक रुपयों के पीछे शिष्यों के पास जाते रहते हैं। प्राचीन भारत में, जहाँ तक हम सोचते हैं, एक ही ट्यूटर, द्रोणाचार्य हुए थे। द्रोणाचार्य ही अपने निर्वाह के लिए भीष्म पितामह के पास पहुँचे थे। इस ट्यूशनी विद्या का बड़ा भारी दुष्परिणाम हुआ था। द्रोणाचार्य ने ''**अर्थस्य पुरुषो दासः**'' कहकर अपनी सफाई दी थी और महाभारत के युद्ध में जब तक भीष्म पितामह कौरवों के सेनापति बने रहे तब तक अधर्म युद्ध नहीं हुआ था। जब द्रोणाचार्य सेनापति बने तब ही अधर्म युद्ध आरम्भ हुआ था। द्रोणाचार्य ने द्युत-क्रीड़ा के समय, द्रौपदी के वस्त्र-हरण के समय और अत्यन्त अन्याय-पूर्वक अभिमन्यु-वध के समय आदि अवसरों पर अन्याय का समर्थन किया था। यह है गुरु का धन, आजीविका-लोभ में शिष्य के पास जाना। प्रस्तुत मन्त्र में सन्देश है कि शिष्य को गुरु के चरणों में उपस्थित होना चाहिए और गुरु के अनुशासन, नियन्त्रण में विद्या ग्रहण करना चाहिए और अपने जीवन का निर्माण करना चाहिए।

चलभाष- ९४३२३०१६०२

''मेरा अनुभव''

- शेख अब्दुल सलाम

मैंने अपने मकान में एक बिल्ली पाल रखी थी, मेरे मकान के सामने अनेक प्रकार के पेड़ होने के कारण अनेक पशु-पक्षियों का वास होता था। बिल्ली ने कुछ पक्षियों को खाना और जख्मी करना शुरू कर दिया। तभी मैंने बिल्ली को अपने मित्र को दे दिया। आज मेरे घर में कई पशु-पक्षियों का वास है। ज्वार, चावल हर दिन आधा किलो अनाज लगता है। कई प्रकार की चिड़ियाँ और कबूतर अनेक पक्षी का वास है। मुझे बहुत सुन्दर लगता है। सभी पाठकों से अनुरोध है कि अपने-अपने मकान के सामने थोड़े से चावल, बाजरा, ज्वार डालते रहे और अपनी पुरानी संस्कृति को अपनाएँ तथा उनका आशीर्वाद लें। आज विज्ञान युग में पशु-पक्षियों का जीना असम्भव हुआ है। वह अपना वंश बचाने में जुटी हैं। हम उसे खत्म करने पर तुले हुए हैं। आज मोबाईल का जमाना है, उसकी विकिरणों में आकर कई पक्षी नष्ट हो रहे हैं।

मैं अपने घर में सुबह-सवेरे उठते ही चिड़ियों को चावल, बाजरा, ज्वार डालता हूँ जो सुबह मेरा इंतजार करती हैं, चहकती हैं, चिल्लाती हैं। यह मेरा नित्य क्रम है। जो एक गमले में पानी भरा रहता है।

अगर हम सब निर्णय लें कि हमें भी यह आने वाली सदियों में यह चिड़ियाँ पशु-पक्षी देखना है तो मुट्ठी-दो मुट्ठी अनाज सुबह-सवेरे डाले, नहीं तो यह सिर्फ कहानियों और किताबों में और चिड़ियाँघरों में ही मिलेंगी।

आने वाले कल को यह चिड़ियाँ नहीं देखेंगे। अब अपना काम शुरू करें, हर दिन मुट्ठी-दो मुट्ठी अनाज डालना न भुले। धन्यवाद

- शेशम अनुसन्धान विस्तार केन्द्र, मराठवाड़ा विश्वविद्यालय, परभणी, महाराष्ट्र-४३१४०१

ईश्वर का यह उपदेश है कि ब्रह्माण्ड में जिस प्रकार के जितने पदार्थ हैं उसी प्रकार के उतने ही मेरे ज्ञान में वर्तमान हैं। योगविद्या को नहीं जानने वाला उन को नहीं देख सकता और मेरी उपासना के विना कोई योगी नहीं हो सकता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.५

राजा और विद्वानों को योग्य है कि वे निरन्तर राज्य की उन्नति किया करें क्योंकि राज्य की उन्नति के विना विद्वान् लोग सावधानी से विद्या का प्रचार और उपदेश भी नहीं कर सकते और न विद्वानों के संग और उपदेश के विना कोई राज्य की रक्षा करने के योग्य होता है तथा राजा, प्रजा और उत्तम विद्वानों की परस्पर प्रीति के विना ऐश्वर्य की उन्नति के विना आनन्द भी निरन्तर नहीं हो सकता। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२०**

जिज्ञासा समाधान – ४९

-आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा १- माननीय आचार्य सत्यजित् जी!

सादर वन्देमातरम्।

मेरे मन में छोटी-सी जिज्ञासा है कि बहुत से संन्यासी अपने नाम के साथ 'सरस्वती' लगाते हैं। क्या यह एक उपाधि है या सम्मान है जो किसी संस्था के द्वारा प्रदान किया जाता है। सरस्वती का सामान्य अर्थ है विद्या की देवी सरस्वती- जैसा विद्वान् होना। कृपया खुलासा कर कृतार्थ करें। क्या संन्यासी के अलावा दूसरे किसी गृहस्थ विद्वान् को यह सम्मान चिह्न लगाने का अधिकार नहीं है?

इसी तरह आचार्य के विषय में भी है। आचार्य की परिभाषा क्या है? क्या कोई भी आचार्य लिख सकता है? किसी संस्था शिक्षण संस्था के प्राध्यापक को भी आचार्य कहा जा सकता है। एक विद्वान् को भी सम्मानार्थ आचार्य कहकर पुकारा जा सकता है।

डॉ. एस.एल. वसन्त, बी-१३८४, नागपाल स्ट्रीट, फाजिलका, पंजाब

समाधान- आपकी जिज्ञासा सरस्वती व आचार्य पर है। दश नामी संन्यासियों में गिरी, पुरी, भारती, अरण्य, पर्वत, सागर, समुद्र, वन, सरस्वती और तीर्थ ये सब हैं। ये गिरी, पुरी आदि उपाधियाँ हैं। जो कोई संन्यास लेने वाला, जिस उपाधि से युक्त संन्यासी से संन्यास ग्रहण करता है, वह भी अपने संन्यास गुरु वाली उपाधि को अपने नाम के पीछे लगाना आरम्भ कर देता है। इस प्रकार की उपाधि किसी संस्था से प्रदान नहीं की जाती है, इसमें तो संन्यास गुरु ही मुख्य कारण है। सरस्वती शब्द का अर्थ है-

सरौ विविधं ज्ञानं विद्यते यस्यां चितौ सा सरस्वती

अर्थात् जिसको विविध विज्ञान शब्द, अर्थ, सम्बन्ध प्रयोग का ज्ञान यथावत् होवे, उसको सरस्वती कहते हैं। इस प्रकार सरस्वती अर्थ के अनुसार कोई मनुष्य भी हो सकता है और परमेश्वर के अनन्त नामों में से एक नाम तो है ही। संन्यासी ही इन उपाधियों को लगाते हैं अन्य गृहस्थ आदि नहीं।

आचार्य विद्या पढ़ाने वाले, शिक्षा देने वाले को कहते हैं, जिसके प्रति हमारा सम्मान का भाव रहता है। आचार्य की परिभाषा हमारे ऋषियों ने इस प्रकार की है-

१. उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः।
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते।।

मनु. २.१४०

जो यज्ञोपवीत कराके कल्पसूत्र (वेदोक्त यज्ञादि का निरुपण कराने वाली विद्या) और वेदान्त सहित शिष्य को वेद पढ़ावे, उसे आचार्य कहते हैं।

२. आचारं ग्राहयत्याचिनोत्यर्थानाचिनोति बुद्धिमिति वा।

नि. १.२.१

जो आचार को ग्रहण करावे, शास्त्र के अर्थों का ज्ञान करावे और बुद्धि का ग्रहण करावे उसको आचार्य कहते हैं।

३. जो साङ्गोपाङ्ग वेदविद्याओं का अध्यापक सत्याचार का ग्रहण और मिथ्याचार का त्याग करावे वह आचार्य कहाता है। **महर्षि दयानन्द**

यदि उपरोक्त परिभाषा के अनुसार किसी शिक्षण संस्थान के प्राध्यापक हैं और कोई अन्य विद्वान् हैं उनको सम्मानार्थ आचार्य कहकर पुकारा जा सकता है। आचार्य बनने के लिए वर्षों तपस्या पूर्वक गुरुकुल में गुरु की आज्ञापालन करते हुए विद्या अध्ययन करना होता है। अपने अन्दर अनेक सद्‌गुणों का विकास करना होता है। आचार्य दो-चार दिन अथवा एक-दो सप्ताह में तैयार नहीं होते हैं।

जिज्ञासा २-

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात्। आथोर्हस्कम्भ उपमस्य नीले पथां विसर्गे धरूणेषु तस्थौ।।

अथर्व. ५.१.६

ज्ञानी महात्माओं ने सात मर्यादाएँ बनाई हैं, यदि मनुष्य उनमें से एक का भी उल्लंघन करता है तो वह पापी हो जाता है।

प्रश्न है वे सात मर्यादाएँ कौनसी हैं जिनसे मनुष्य पापी हो जाता है। दूसरा जनेऊ को कान पर चढ़ाने की परम्परा का वैदिक आधार क्या है?

मध्य प्रदेश, ऊना

समाधान- १. अथर्ववेद के मन्त्र में कही हुई सात मर्यादाएँ कौन-सी हैं? उनको लिखने से पहले मर्यादा शब्द के अर्थ को देख लेते हैं। मर्यादा का अर्थ है सीमा, छोर, किनारा, हद आदि। परमेश्वर ने सब जड़ चेतन को मर्यादाओं में बांधा है, जो-जो भी अपनी मर्यादा में रहताा है वह-वह उन्नति करता है और जिसने मर्यादाओं का अतिक्रमण किया उसने हानि को ही प्राप्त किया। इसलिए परमेश्वर ने मनुष्य उन्नति के लिए सात मर्यादाएँ कहीं और उनका अतिक्रमण न करने का संकेत किया है। उन सात

मर्यादाओं को महर्षि यास्क ने अपने ग्रन्थ निरुक्त में खोला है-

सप्तैव मर्यादाः कवयस्चक्रुः।
तासामेकामप्यभिगच्छन्नंहस्वान् भवति।
स्तेयं तल्पारोहणं ब्रह्महत्यां भ्रूणहत्यां सुरापानं
दुष्कृतस्य कर्मणः पुनः पुनः सेवां पातकेऽनृतोद्यमिति।
नि. ६.२७

अर्थात् सात मर्यादाएँ क्रान्तदर्शी ऋषियों ने सम्पूर्ण धर्म का विचार करके बनाई उनमें से एक का भी उल्लंघन करके मनुष्य पापवान् होता है।

१. स्तेयम्- चोरी, **२. तल्पारोहणाम्**- दूसरे के बिस्तर पर चढ़ना अर्थात् व्यभिचार कर्म, **३. ब्रह्महत्याम्**- वेदपाठी धार्मिक ब्राह्मण की हत्या, **४. भ्रूणहत्याम्**- गर्भस्थ शिशु की हत्या, **५. सुरापानम्**- मद्यपान (नशा करना) **६. दुष्कृतस्य कर्मणः पुनः पुनः सेवाम्**- दुष्कृत कर्म का बार-बार सेवन, **७. पातकेऽनृतोद्यम्**- पाप कर झूठ बोलना। इन सात मर्यादाओं का संकेत वेद मन्त्र कर रहा है।

२. कान पर जनेऊ चढ़ाने की परम्परा का कोई वैदिक आधार पढ़ने-सुनने को नहीं मिला। ऐसा हो सकता है कि पहले के लोग उत्तरिय (ऊपर का वस्त्र) कम पहनते थे और जनेऊ कटि से नीचे रहा होगा। वस्त्र ऊपर न होने से लघु शंका आदि करते समय जनेऊ नीचे भूमि पर टिक जाता होगा। वह नीचे न टिके इसके लिए सुविधा की दृष्टि से कान पर चढ़ाना किया होगा। बाद में इसकी परम्परा ही चल पड़ी, जबकि आज उसकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आजकल ऊपर पूरे वस्त्र धारण किये जाते हैं, जिससे जनेऊ नीचे टिकता ही नहीं है। जब नीचे टिकता ही नहीं है तो ऊपर कान पर चढ़ाने की क्या आवश्यकता है? हाँ जिस किसी का जनेऊ नीचे टिकता है वह उसको ऊपर कर सकता है।

जिज्ञासा ३- एक विद्वान् ने हवन कराते समय पञ्च महायज्ञों की व्याख्या करते हुए कहा की ''स्तुति-प्रार्थना-उपासना'' मन्त्र जो हवन के आरम्भ में किये वे 'ब्रह्म यज्ञ' व बाकी का हवन 'देव यज्ञ' है। क्या यह ठीक है? कृपया शंका का समाधान करें।

ज्ञान प्रकाश कुकरेजा, ७५६/५, अर्बन स्टेट, करनाल, हरियाणा

समाधान- महर्षि ने संस्कार विधि में पञ्च महायज्ञों में अग्निहोत्र देवयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ करने के बाद आचमन करके प्रारम्भ करने को लिखा है, वहाँ ये मन्त्र नहीं हैं, हो सकता है उस प्रकरण को लेकर उस विद्वान् ने ऐसा कहा हो। ऐसा कहने में कोई सैद्धान्तिक हानि भी नहीं दिख रही। हाँ इससे ऐसा नहीं मानना चाहिए कि ये ८ मन्त्रों का पाठ ही ब्रह्म यज्ञ है, अपितु जो महर्षि ने सन्ध्योपासना के मन्त्र दिए हैं वह ब्रह्म यज्ञ है। संध्योपासना के मन्त्रों के साथ ये ८ मन्त्र बोल इनके सहित ब्रह्म यज्ञ कहा जा सकता है। संस्कार विशेष और प्रत्येक मांगलिक कार्य में ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करनी ही चाहिए, करनी होती है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर।

राजा और विद्वानों को योग्य है कि वे निरन्तर राज्य की उन्नति किया करें क्योंकि राज्य की उन्नति के विना विद्वान् लोग सावधानी से विद्या का प्रचार और उपदेश भी नहीं कर सकते और न विद्वानों के संग और उपदेश के विना कोई राज्य की रक्षा करने के योग्य होता है तथा राजा, प्रजा और उत्तम विद्वानों की परस्पर प्रीति के विना ऐश्वर्य की उन्नति के विना आनन्द भी निरन्तर नहीं हो सकता।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२०

जो विद्वानों से शिक्षा पाई हुई स्त्री हो वह अपने-अपने पति और अन्य सब स्त्रियों को यथायोग्य उत्तम कर्म्म सिखलावे जिससे किसी तरह वे अधर्म्म की ओर न डिगें। वे दोनों स्त्री पुरुष विद्या की वृद्धि और बालकों तथा कन्याओं को शिक्षा किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४३

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग १० मास से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

-: चिकित्सक :-

डॉ. रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर, राजस्थान

दूरभाष - ०९४६८८९६९१८

संस्था-समाचार

(१) डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रमः- सम्पन्न कार्यक्रम-

(क) १५ सितम्बर को अजमेर में श्री मनोज शारदा जी के परिवार में जन्म दिन के उपलक्ष्य में यज्ञ सम्पन्न कराकर पारिवारिक सत्संग प्रदान किया।

(ख) १६ से २६ सितम्बर- अजमेर के आर्यजनों के यहाँ जाकर, उनसे सम्पर्क कर, ऋषि मेले का निमन्त्रण प्रदान किया। प्रातः काल ऋषि उद्यान में यज्ञोपरान्त प्रवचन भी प्रदान किया।

(ग) २७ से ३० सितम्बर को 'स्मृति भवन न्यास, जोधपुर' के वार्षिक कार्यक्रम में भाग लिया।

आगामी कार्यक्रम-

(क) १८-२० अक्टूबर दीनानगर मठ, पंजाब के कार्यक्रम में भाग लेंगे।

(ख) २०-२७ अक्टूबर को ऋषि उद्यान में होने वाले 'योग-साधना शिविर' में प्रशिक्षण प्रदान करेंगे।

(२) श्री ओममुनि जी व मुमुक्षु मुनि जी का प्रचार कार्यक्रम-

२० व २१ सितम्बर को आर्य उपप्रतिनिधि सभा, नागौर के तत्त्वावधान में समायोजित आर्यसमाज कुचामन सिटी के वार्षिकोत्सव में मुख्यातिथि के रूप में पधार कर, यज्ञ सम्पन्न कराया व कार्यक्रम में मुख्य वक्ता रहें।

(३) पं. नौबतराम जी का प्रचार कार्यक्रम-

६ सितम्बर को ऋषि उद्यान से चलकर ७ सितम्बर को पाली मारवाड़ में लोगों से सम्पर्क कर, ऋषि मेले का निमन्त्रण दिया। ८ सितम्बर को जाडूँदा में यज्ञ सम्पन्न करा, सत्संग प्रदान किया। १२ को जोजावर में प्रातः यज्ञ सम्पन्न करा सत्संग प्रदान किया। १३ को आबू रोड आर्यसमाज पहुँचकर, मेले का निमन्त्रण प्रदान किया। पुनः यहाँ से १५ सितम्बर को अहमदाबाद पहुँचकर, कांकरिया रोड आर्यसमाज को केन्द्र बना शहर व समीपवर्ती आर्यसमाजों में ऋषि मेले का निमन्त्रण प्रदान किया, इनमें कुछ इस प्रकार हैं- आर्यसमाज सहजपुर बोघा, आर्यसमाज कुबेर नगर, आर्यसमाज सरदारनगर, आर्यसमाज थल तेज, आर्यसमाज वाड़ज, आर्यसमाज चाँदखेड़ा, आर्यसमाज शाहपुर, नरोड़ा, लाल दरवाजा आदि। २४ से ३० सितम्बर तक जोधपुर स्मृति भवन के कार्यक्रम में भाग लिया तथा समय-समय पर शहर के आर्यजनों से सम्पर्क कर उन्हें ऋषि मेले का आमन्त्रण प्रदान किया।

(४) आचार्य कर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम-

-१६ से ३० सितम्बर २०१३

आनन्द धाम आश्रम, गढ़ी, उधमपुर (जम्मू) में २२ से २९ सितम्बर तक आयोजित योग-शिविर में प्रशिक्षक के रूप में भाग लिया। इस दौरान आपने योगदर्शन, शंका समाधान व यज्ञ विषयक कक्षाएँ ली। इस शिविर में लगभग १०० शिविरार्थियों ने भाग लिया जो जम्मू, पंजाब, हिमाचल, हरियाणा, उत्तराखण्ड, उ.प्र., राजस्थान, महाराष्ट्र व पश्चिम बंगाल आदि से पधारें थे।

(५) संस्कृत सम्भाषण शिविर-

परोपकारिणी सभा वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों को संरक्षित करने के लिए कृतसंकल्प है। चूँकि वैदिक संस्कृति व सभ्यता के मौलिक स्रोत वेद, उपनिषद्, दर्शन आदि आर्ष साहित्य, संस्कृत भाषा में ही निबद्ध है अतः ऐसी देवभाषा-संस्कृत भाषा का संरक्षण, संवर्धन करना, सभा का लक्ष्य हो जाता है। वर्तमान में हम अपनी भाषा के महत्त्व से अनभिज्ञ होते जा रहे हैं, अतः आज 'संस्कृत-भाषा-अवबोधन' हमारे लिए एक कठिन लक्ष्य हो रहा है।

संस्कृत भाषा हमारी लोकभाषा बने, इस उद्देश्य से परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्तमान समय में संस्कृत भाषा का प्रशिक्षण देने का अभियान प्रारम्भ हो चुका है। इस अभियान के अन्तर्गत उपाध्याय श्री भैरूलाल जी, जो कि ऋषि उद्यान में ही निवास करते हैं, संस्कृत भाषा के व्यावहारिक सम्भाषण का प्रशिक्षण दे रहे हैं। सितम्बर माह में उपाध्याय भैरूलाल जी के द्वारा अजमेर व आस-पास के क्षेत्रों में जो 'संस्कृत-सम्भाषण शिविर' लगाए गए, उनके विवरण इस प्रकार हैं-

(क) दिनांक - २ से ११ सितम्बर २०१३ तक
स्थान - चारण विद्यापीठ माध्यमिक विद्यालय, अजमेर
संख्या - लगभग १२० छात्र

(ख) दिनांक - १७ से २८ सितम्बर २०१३ तक
स्थान - राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर
संख्या - स्नातक कला वर्ग के प्रथम वर्ष की ३० छात्राएँ

(६) यज्ञ एवं प्रवचन- जैसा कि विदित है कि ऋषि उद्यान आर्यजगत् के उन स्थानों में से एक है जहाँ पूरे वर्ष दोनों समय अपरिहार्य रूप से यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम होता है। प्रातःकाल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का स्वाध्याय किया जाता है। प्रातः प्रवचन के क्रम में सामान्य दिनों में डॉ. धर्मवीर जी जहाँ विभिन्न विषयों पर

अपने विचार रखते हैं, वहीं स्वामी विष्वङ् जी अपने योगदर्शन के क्रम को आगे बढ़ाते हैं तथा सायं सत्संग में जहाँ सोमवार से बुधवार को आचार्य सत्येन्द्र जी व्यवहारभानु आदि ऋषि ग्रन्थों का स्वाध्याय कराते हैं, वहीं गुरुवार से शनिवार को आचार्य कर्मवीर जी ऋषि के अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' का स्वाध्याय करवाते हैं। रविवार को गुरुकुल के ब्रह्मचारियों में से कोई एक ब्रह्मचारी किसी विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करते हैं।

१३ से २६ सितम्बर तक के अपने प्रवचन क्रम में डॉ. धर्मवीर जी ने धर्म, वेद, मनुष्यत्व, सामाजिकता आदि विषयों पर वेदमन्त्रों के माध्यम से चर्चा की। संसार की उत्पत्ति के प्रयोजन को आपने भवन के उदाहरण के माध्यम से समझाते हुए बताया कि जिस प्रकार किसी भवन में नींव, दिवार, छत, कंगूरा/कलश आदि होते हैं, इनमें कंगूरा/कलश सर्वोपरि है, कलश के लिए ही छत, दिवार, नींव है। उसी प्रकार संसार में मनुष्य सर्वोपरि है, समस्त मनुष्येतर रचना चाहे वह जड़ हो या चेतन, वह मनुष्य के सौकर्य, सुविधा के लिए ही है। यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब सब कुछ मनुष्य के लिए है तो क्या मनुष्य कैसे भी अथवा जैसा चाहे वैसा इनका प्रयोग कर सकता है? इसका समाधान देते हुए आपने बताया कि नहीं, इन साधनों/संसार की वस्तुओं का प्रयोग हम स्वच्छन्दता पूर्वक नहीं कर सकते। यदि स्वच्छन्दतापूर्वक प्रयोग करेंगे तो हमें दु:ख ही प्राप्त होगा, सुख प्राप्त करना है तो इन साधनों का नियम पूर्वक/संयम पूर्वक प्रयोग करना होगा। और इन्हीं नियमों को हमारे शास्त्रों में धर्म की संज्ञा प्रदान की गई है। कोई यहाँ प्रश्न उठा सकता है कि यह तो मनुष्य को पराधीन बनाने की, परतन्त्र बनाने की प्रक्रिया है। इसका समाधान देते हुए आपने बताया कि क्या हम संसार में प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण स्वन्त्रता प्रदान कर सकते हैं? नहीं, क्योंकि यह सम्भव ही नहीं है, एक व्यक्ति को यदि पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की जाए तो वह दूसरों को तथाकथित परतन्त्रता में ला ही देगी। बिना नियमों के संसार चल ही नहीं सकता, तो पुन: क्यों न श्रेष्ठ नियमों पर चला जाए। ये श्रेष्ठ नियम ही वैदिक धर्म है। यहाँ एक और विचारणीय बात यह है कि नियम तो, अनेक विकल्पों के उपस्थित होने पर ही होता है और साधन सम्पन्न के लिए होता है। पशु जिन्हें भोजन, जीवन सम्बन्धि क्रियाओं में विकल्प प्राप्त ही नहीं है, उन्हें वे क्रियाएँ करनी ही होती है और वे करते हैं। अत: उन्हें पाप-पुण्य नहीं लगता। किन्तु मनुष्य को विकल्पों के उपस्थित होने, उनके चयन की स्वतन्त्रता होने के कारण श्रेष्ठ विकल्पों के चयन में पुण्य व अहितकर नियम के चयन में पाप होता है।

ऐतरेय उपनिषद् की चर्चा करते हुए आपने बताया कि यह उपनिषद् सृष्टि-निर्माण-विषयक है। इसके अनुसार परमेश्वर यह विचार करता है कि किस प्रकार मैं एक से बहुत हो सकता हूँ? अत: सृष्टि रचना का विचार आया कि इसके द्वारा ही मैं एक से अनेक/बहुत हो सकता हूँ। अत: उसने लोकों का निर्माण किया। इन लोकों में पृथिवी एक लोक है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है विस्तार वाली (पृथु विस्तारे)। अत्यन्त विस्तृत होने के कारण इसका नाम पृथिवी है। इसे मर्त्य लोक भी कहा जाता है क्योंकि यह प्रत्येक वस्तु का मृत्यु/विनाश करता है। अब यहाँ एक प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या हम यहाँ अपनी इच्छा से हैं तो इसका उत्तर आता है नहीं। तो फिर हम यहाँ किसकी इच्छा से हैं? क्यों हैं? हमारा प्रयोजन क्या है? क्या शरीर/साधन, सम्पत्ति हमारा प्रयोजन है? नहीं ये हमारे प्रयोजन नहीं हो सकते क्योंकि ये तो साधन हैं, साधन कभी भी साध्य नहीं हो सकते, वे तो साध्य की सिद्धी के लिए होते हैं। इत्यादि अनेक प्रश्न-उत्तर की शृंखला से आपने बताया कि हम यहाँ परमेश्वर की कृपा से, सर्वोत्तम आनन्द प्राप्ति के लिए हैं और उसी का नाम मुक्ति है।

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज के तृतीय नियम में वेद की महत्ता प्रतिपादित करते हुए घोषणा की कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। आज समाज के कुछ विचारक इस नियम को आधार बनाकर प्रश्न करते हैं कि क्या वेदों में आज की तथा भविष्य में खोजी जाने वाली समस्त विद्या है? इसका समाधान देते हुए आपने बताया कि वेदों में सब सत्य विद्या मूल रूप में है। यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार बीज में पेड़ का अस्तित्व है। पुन: अक्षसूक्त की चर्चा करते हुए आपने बताया कि वेद में जुएँ खेलने की निन्दा तथा कृषि कार्य करने की प्रशंसा की गई है। यहाँ जुएँ का केवल जुआ अर्थ ही नहीं है बल्कि यह लोभ की प्रवृत्ति से किए जाने वाले समस्त कर्मों का वाचक है, उसी प्रकार कृषि कार्य भी परिश्रम पूर्वक किए जाने वाले कर्मों का वाचक है। वेद में हमें लोभ की प्रवृत्ति छोड़कर, परिश्रम करने की और उस परिश्रम से प्राप्त फल को बहुत मानते हुए उसमें सन्तोष करने की प्रेरणा दी गई है-

अक्षैर्मा दीव्य: कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमान:

मानवीय संवेगों की चर्चा करते हुए आपने बताया कि मनुष्यों व पशुओं में अपनी सन्तति के प्रति संवेग होते हैं लेकिन पशुओं में जहाँ संवेग कम समय के लिए होते हैं वहीं मनुष्यों में इनकी समयाधिकता होती है। पशु-पक्षी अपने शिशु की पालना करते हैं लेकिन जब वह समर्थ हो जाता है उस दिन उनका परस्पर सम्बन्ध प्राय: नष्ट-सा हो

जाता है। मनुष्यों में संवेग अधिक समय के लिए होते हैं और तीव्र होते हैं तथा मनुष्य, पशुओं की तुलना में अधिक साधन सम्पन्न हैं, अत: उसके अनर्थ करने की सम्भावना भी अधिक है, ये संवेग मनुष्यों के लिए आवश्यक है, इनका त्याग करना बिल्कुल सम्भव नहीं, आवश्यकता है तो बस इन्हें सही दिशा देने की।

सांमनस्य सूक्त की व्याख्या में आपने बताया कि परिवार, समाज के ठीक संचालन के लिए आपस में प्रेम होना आवश्यक है। प्रेम कैसे और कितना करना है, इसके लिए वेद कहता है कि जैसे गाय, अपने नवजात बछड़े को स्नेह करती है, ठीक उसी प्रकार हमारे परिवार का प्रत्येक सदस्य दूसरे सदस्य के प्रति स्नेह का भाव रखें-

अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या

चूँकि मनुष्य अल्पज्ञ है, अविद्या से युक्त हो जाता है अत: हमारी इन शुभ गुणों (प्रेमादि) के प्रति प्रीति स्वभाविक नहीं हो पाती। अत: समाज के वयोवृद्ध लोगों का कार्य ही ये हो जाता है कि वे मानव को मानव बनाने की प्रक्रिया जारी रखें और अच्छे संस्कारों का उनमें आधान करते रहें।

समाज में एकता का वास्तविक कारण क्या है? क्या एक भाषा, एक जाति या एक देश का होना एकता का कारण है तो विचार करने पर उत्तर आता है नहीं, क्योंकि एक भाषा, एक जाति, एक देश यहाँ तक कि एक माता-पिता की दो सन्तानों में विरोध वैमनस्य दिखाई देता है। एकता का वास्तविक कारण तो विचारों की समानता है। इसी समानता के लिए वेद कहता है कि पुत्र, माता-पिता के ही विचार वाला/व्रत वाला हो। पत्नी, पति के समान विचार वाली हो-

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्।।

विचारों के साथ-साथ यदि हमारा खान-पान भी एक जैसा हो जाए तो हमारी यह एकता बलवती होनी ही है-

समानी प्रपा सह वोऽन्नभाग: समाने योक्ते सह वो भुनज्मि।

२७ से ३० सितम्बर २०१३ तक के अपने प्रवचन क्रम में स्वामी विष्वङ् जी ने 'मन का स्वभाव' इस विषय को आगे बढ़ाते हुए बताया कि पिछली चर्चा से यह स्पष्ट हो गया था कि मन सात्विक स्वभाव वाला है क्योंकि इसमें सतो गुण सर्वाधिक मात्रा में है। रजो गुण व तमो गुण भी इसके उपादान कारण है अत: उनका भी प्रभाव इसमें आता है किन्तु वह अल्प काल के लिए होता है अर्थात् मन कुछ समय के लिए चंचल व तन्द्रा युक्त होता है। अत: सिद्धान्तत: यह कहा जा सकता है कि मनुष्य को शान्त धार्मिक होना चाहिए किन्तु जब हम समाज में देखते हैं तो इसके विपरीत पाते हैं। लोगों को काम, क्रोध, लोभ, तन्द्रा आदि से युक्त पाते हैं, जो कि रजस् व तमो गुण का प्रभाव है। इन प्रश्नों का समाधान करते हुए स्वामी जी ने बताया कि मन का स्वभाव हमारे ज्ञान व पूर्व के संस्कारों पर भी निर्भर करता है। यद्यपि मन सात्विक है तथापि व्यक्ति के अज्ञान तथा कुसंस्कारों के कारण वह राजसिक व तामसिक अवस्था में भी अधिकांश समय के लिए रह सकता है। पुराने संस्कार व्यक्ति को पुन: पुन: उन्हीं पतित कर्मों को करने के लिए प्रेरित करते हैं जब तक कि उन संस्कारों को ज्ञान पूर्वक हटाया नहीं जाता।

सायंकालीन प्रवचन - १६-१८ सितम्बर तक के प्रवचन क्रम में आचार्य सत्येन्द्र जी ने बताया कि, जो व्यक्ति गलत को गलत नहीं मानता और उन गलत कार्यों को न छोड़ता तथा जो सत्य को जानते हुए भी उसका आचरण न करके गलत ही करता है वह पाप को बढ़ावा देकर स्वयं की तथा समाज की बहुत बड़ी हानि करता है।

१९-२१ सितम्बर तक के प्रवचन में आचार्य कर्मवीर जी ने सत्यार्थ प्रकाश का स्वाध्याय कराते हुए बताया कि, वेदों में दो प्रकार की बातों का उपदेश है-

१. विधि, २. निषेध।

विधि- किस-किस कार्य को करें, और

निषेध- किस-किस कार्य को न करें। आगे आपने बताया कि, आत्मा की सबसे बड़ी उपलब्धि क्या है? अर्थात् आत्मा के द्वारा तीन प्रकार के दु:खों से छूट जाना ही आत्मा की सबसे बड़ी उपलब्धि है वे तीन प्रकार के दु:ख हैं- (१) आध्यात्मिक (२) आधिदैविक (३) आधिभौतिक।

आचार्य सत्यप्रिय जी ने बताया कि, विद्या के बिना मनुष्य लक्ष्य को कभी प्राप्त नहीं कर सकता। आगे आपने सत्य, अमृत और प्रकाश पर चर्चा करते हुए बताया कि जब व्यक्ति सत्य का आचरण करता है तो उसे प्रकाश अर्थात् सन्मार्ग की प्राप्ति होती है और सन्मार्ग पर चलते हुए वह अमृत रूपी मोक्ष को प्राप्त करता है।

२२ सितम्बर को ब्र. शोभित जी ने शुक्र नीति के श्लोकों के माध्यम से बताया कि, व्यक्ति आलस्य, प्रमाद, तन्द्रा और मूढ़ जैसी अवस्थाओं में रह कर अपने लक्ष्य से भटक जाता है।

२९ सितम्बर ब्र. लक्ष्यवीर जी ने अपने विचार प्रकट करते हुए बताया कि राजा, संन्यासी, ब्राह्मण, कृषक आदि जब अपने कर्त्तव्यों को छोड़ अन्य मार्ग अपना लेते हैं अथवा गलत मन्त्रणा से कार्य करते हैं तो वो उसी समय से अपने पतन का प्रयास आरम्भ कर देते हैं, आगे आपने बताया कि सत्संगति ही मनुष्य के उत्थान में सहायक होती है।

ब्र. लक्ष्यवीर व दीपक आर्य

आर्यजगत् के समाचार

१. प्रथम पुण्य तिथि, असंख्य स्मृति शेष- 'श्री भुवन आर्य' श्रेष्ठ समाज सेवक, आर्य समाजी, धार्मिक, विद्वान् एवं राष्ट्रप्रेमी, मानवतावादी व्यक्ति थे। आप हमारे परिवार के सर्वश्रेष्ठ आभूषण थे। आपको हरियाणा आर्यसमाज के द्वारा दिनांक १३/११/२००६ को कर्त्तव्य मूर्ति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसी तरह आप को अन्य पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। हैदराबाद के एक ग्राम द्वारा सर्वश्रेष्ठ आर्य एवं उदयपुर नौलखा महल में स्वामी संकल्पानन्द द्वारा श्रेष्ठ आर्यसमाजी की उपाधि प्राप्त हुई। माउन्ट आबू, उदयपुर, शिवगंज, होशंगाबाद, अजमेर, तिलोरा एवं अन्य प्रसिद्ध आर्ष गुरुकुलों से प्रभावित होकर आपने छिन्दवाड़ा में बालक एवं कन्या गुरुकुलों के निर्माण का संकल्प लिया। आपके द्वारा ५ एकड़ भूमि दान की गई एवं आपके सहयोग से सोनाखार में बालकों का आर्ष गुरुकुल चल रहा है। इस आर्ष गुरुकुल सोनाखार का निर्माण २००८ में किया गया था। आपके द्वारा दान की गई भूमि में गुरुकुल का निर्माण अभी बाकी है।

आपका हृदय विदारक समाचार २८/१०/२०१२ दिन रविवार को सुबह प्राप्त हुआ। इस समाचार पर विश्वास करना बहुत कठिन था परन्तु हमें इस अटूट सत्य को स्वीकार कर विधाता के आगे नतमस्तक होना पड़ा।

आपने जिस दिन से यज्ञ प्रारम्भ किया उस दिन से आप दोनों समय यज्ञ करते रहे। आपका एक भी दिन बिना यज्ञ करे व्यतीत नहीं हुआ। आपने अपने जीवन की अन्तिम शाम पर भी बच्चों के साथ यज्ञ किया। आपने अपने निवास पर भी यज्ञशाला का निर्माण करवाया। आज आर्य जी हमारे बीच नहीं है परन्तु उनके दिखाए गए मार्ग पर उनका परिवार आज भी दोनों समय यज्ञ कर रहा है एवं पंच महायज्ञ भी प्रतिदिन कर रहे हैं। हम सभी आपके बताये मार्ग पर सदैव चलते रहेंगे।

२. सरल आध्यात्मिक शिविर- २८ अक्टूबर से १ नवम्बर २०१३ तक गुरुकुल भैयापुर लाढ़ौत, रोहतक, हरियाणा में शिविराध्यक्ष स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक के सान्निध्य में आयोजित किया जा रहा है।

आयोजक वैदिक सरल आध्यात्मिक शिविर समिति। दूरभाष-०९३५५६७४५४७

३. यज्ञानुष्ठान- बनीपार्क, जयपुर के टिक्कीवाल मैरिज गार्डन में विगत रात्रि २४ सितम्बर २०१३ को राज्य सरकार में वरिष्ठ अति. निदेशक वेद प्रकाश गुप्ता व श्रीमति सीमा टिक्कीवाल ने अपनी पुत्री इप्सिमारेग का जन्म दिन समारोह वृहद यज्ञानुष्ठान कर मनाया।

४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- १३ से १५ सितम्बर २०१३ तक आर्यसमाज सेक्टर २०, पंचकूला का वार्षिकोत्सव हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा होशंगाबाद मध्य प्रदेश के युवा विद्वान् आचार्य श्री आनन्द पुरुषार्थी थे। जिन्होंने वेद मन्त्रों के आधार पर अलग-अलग सत्रों में ईश्वर, कर्मफल व्यवस्था, गौमाता, यज्ञ व राष्ट्र जैसे विषयों की विस्तार से व्याख्या की। भजनोपदेशक के रूप में श्री विजय भूषण आर्य, दिल्ली आमन्त्रित थे। उन्होंने सिद्धान्तनिष्ठ मधुर भजनों से लोगों का मन मोह लिया। प्रधान डॉ. श्रीमती रजनी थरेजा ने सभी का आभार व्यक्त किया। मन्त्री श्री ओमप्रकाश गुगलानी ने मंच संचालन किया।

५. शिविर सम्पन्न- गुरुकुल आश्रम आमसेना के तत्त्वावधान में छत्तीसगढ़ राज्य के महासमुन्द जिलान्तर्गत ग्राम देवरी के शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में पंचदिवसीय १० से १४ सितम्बर तक योग, व्यायाम प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें ६०० बालक-बालिकाओं को योग, आसन, प्राणायाम, जूडो, कराटे, कूम्फू, तलवारबाजी, लाठी चालन, दण्ड-बैठक, सूर्यनमस्कार, भूमिनमस्कार आदि आत्मरक्षा के गुर सिखाये गये।

६. गुरुकुल की स्थापना- परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से प्रख्यात वैदिक विद्वान् एवं अध्यात्म पथ के सम्पादक आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री द्वारा ओडिशा के ग्राम चुंगीदादर (खलियापाली) पो. भरसूजा में 'अध्यात्म गुरुकुल आश्रम' की स्थापना हजारों लोगों की उपस्थिति में की गई। गुरुकुल के निर्माण के लिए पूज्य आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री को श्री सुभाष साहु, श्री आनन्द कुमार साहु, श्री रघुमणि साहु एवं करुणाकर साहु ने जमीन दान देकर पुण्य लाभ प्राप्त किया।

७. १०८ कुण्डीय गायत्री महायज्ञ- अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैदिक विद्वान् आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री के ब्रह्मत्व में विदेश में पहली बार १०८ कुण्डीय गायत्री महायज्ञ का भव्य आयोजन हुआ। यह आयोजन आर्यसमाज मारखम, टोरंटो, कनाड़ा के विशाल प्रांगण में बड़ी श्रद्धा के साथ सम्पन्न हुआ। भारी संख्या में उपस्थित श्रोताओं ने जहाँ गायत्री के महत्त्व को समझा वहीं यज्ञ की महिमा को भी आत्मसात किया।

८. वार्षिकोत्सव- चरखी दादरी का ७३वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक २५, २६ तथा २७ अक्टूबर २०१३ को मनाया जा रहा है। आप सभी आर्यजन इस कार्यक्रम में

सादर आमन्त्रित हैं।

९. अथर्ववेद पारायण यज्ञ सम्पन्न- आर्यसमाज हिरण मगरी, उदयपुर, राजस्थान की ओर से दिनांक १२ से २२ सितम्बर २०१३ तक अथर्ववेद पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा मुम्बई से पधारे आचार्य डॉ. सोमदेव शास्त्री थे। गुरुकुल गौतम नगर दिल्ली के ब्रह्मचारी श्री वेदप्रकाश शास्त्री एवं वेंकटेश शास्त्री ने सुमधुर स्वर में वेदपाठ किया।

१०. आर्यसमाज की स्थापना- आर्यसमाज मारतहल्लि, बेंगलोर ने अपनी स्थापना के मात्र ५ वर्ष बाद सुदूर दक्षिण भारत के केरल प्रान्त में श्री के.एम. राजन के नेतृत्व में एक नवीन आर्यसमाज की स्थापना कर एक और कीर्तिमान स्थापित किया। केरल में 'आर्यसमाज बेल्लीनेरी जनपद पालक्काड की स्थापना ओणम् के शुभ अवसर पर शनिवार १४ सितम्बर २०१३ को की गई।

नवीन आर्यसमाज के प्रधान श्री वी. गोविन्दा दास ने सभी अतिथियों एवं उपस्थित आर्यजनों को धन्यवाद दिया। वैदिक प्रार्थना एवं राष्ट्रीय गीत के साथ शान्ति पाठ कर कार्यक्रम का समापन किया गया।

११. वेद प्रचार यात्रा- महर्षि दयानन्द के सपनों को साकार करने के लिए कप्तान जगराम आर्य के नेतृत्व में ग्राम गुलावला, मेधोत हाला, जैनपुर, मौसमपुर, बिहारीपुर, आतँरी, छापड़ा कमानियाँ, खातौली जाट, खातौली अहीर, धोलेड़ा, बेरून्डला, चिरागपुरा, मुकन्दपुरा, टहला और ताजीपुर में १५ से २२ सितम्बर तक वेद प्रचार सम्पन्न हुआ। अब तक ३६६ गाँवों में वेद प्रचार सम्पन्न हो चुका है।

१२. हिन्दी दिवस मनाया- आर्यसमाज नीमच द्वारा १४ सितम्बर २०१३ को आर्यसमाज मन्दिर घण्टाघर के पास नीमच में सायं ४.३० से ७ बजे तक 'हिन्दी दिवस' का आयोजन किया गया। उक्त अवसर पर हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार मालवा के पुरोधा, लेखक, गीतकार श्री बाल कवि बैरागी को 'हिन्दी आर्य रत्न' से शॉल, श्रीफल, आर्य साहित्य एवं अभिनन्दन पत्र भेंट कर सम्मान किया गया। संस्था के उपप्रधान श्री रतावदिया का ९० वर्ष की आयु पूर्ण करने पर शॉल, श्रीफल से सम्मान किया गया।

१३. वेद प्रचार सप्ताह- आर्यसमाज यमलार्जुनपुर (कैसरगंज) बहराइच, उ.प्र. २१ अगस्त श्रावणी पर्व (रक्षा बन्धन) से २६ अगस्त २०१३ तक वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया। जिसमें धर्मवीर आर्य (प्रधान) एवं डॉ. सत्यमित्र आर्य (मन्त्री) के द्वारा दूर दराज के गाँवों में जाकर यज्ञ, प्रवचन एवं वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार किया।

श्री रामनरेश मौर्य (पंकज) के द्वारा महर्षि दयानन्द के सन्देश को कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया। इस अवसर पर प्यारेलाल गुप्ता (कोषाध्यक्ष) विनोद वर्मा (उपमन्त्री) लल्लू प्रसाद (लेखा निरीक्षक) शिव नारायण (पुस्तकालयध्यक्ष) कौशल किशोर वर्मा, बच्छराज वर्मा उपस्थिति रहे।

१४. चिकित्सालय प्रारम्भ- आर्यसमाज आदर्श नगर, अजमेर की ओर से दयानन्द प्राकृतिक और योग व सहायक चिकित्सा पद्धतियों द्वारा कार्य व प्रशिक्षण एक आर्य व योग्य चिकित्सक द्वारा प्रारम्भ कर दिया गया है। तपोभूमि, सैटलाईट हॉस्पीटल के निकट है।

सम्पर्क- प्रधान कुंज बिहारी पालड़िया

चलभाष-९४६१८२८२३२

१५. यज्ञ सम्पन्न- महिला आर्यसमाज मानसरोवर, जयपुर का १९वाँ स्थापना दिवस सैक्टर ४४ के पार्क में चतुर्वेद शतकम् यज्ञ की पूर्णाहुति के साथ सम्पन्न हुआ।

चार दिवसीय कार्यक्रम में देहरादून से आए सत्यपाल सरल के ओजस्वी भजनोपदेश का लाभ स्थानीय निवासियों ने भी उठाया। यज्ञ के ब्रह्मा डॉ. के.पी.सिंह व उषर्बुध रहे। वेदपाठ दीपक आर्य व श्रीमती श्रुति शास्त्री ने किया। मंच संचालन डॉ. सन्दीपन ने किया। महिला समाज की प्रधाना श्रीमती सरोज कालरा एवं अर्जुन देव कालरा ने सभी विद्वानों का सम्मान किया। समाज के वरिष्ठ उपप्रधान ईश्वर दयाल माथुर ने उपस्थितों का आभार व्यक्त किया।

१६. जयन्ती मनाई- आर्यसमाज रामपुरा कोटा द्वारा संचालित मातृ सेवा सदन एवं बाल भारती आर्य शिशु शाला बालिका विद्यालय में २८ सितम्बर को क्रांतिकारी भगतसिंह जयन्ती मनाई। इस अवसर पर आर्यसमाज के मन्त्री एवं मातृ सेवा सदन बालिका विद्यालय के व्यवस्थापक डी.पी. मिश्रा ने सैकड़ों छात्र/छात्राओं को सम्बोधित किया।

चुनाव

१७. आर्यसमाज मन्दिर बरबीघा, शेखपुरा, बिहार के चुनाव में **प्रधान**- श्री शिवमुनि वानप्रस्थ, **मन्त्री**- केदार प्रसाद आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री धर्मदेव प्रसाद आर्य को चुना गया।

१८. आर्य केन्द्रीय सभा, गुड़गाँव, हरियाणा के चुनाव में **प्रधान**- मा. सोमनाथ, **मन्त्री**- प्रभुदयाल चुटानी, **कोषाध्यक्ष**- श्री नरेन्द्र आर्य को चुना गया।

१९. आर्य वीर नेत्र चिकित्सालय, गुड़गाँव, हरियाणा के चुनाव में **प्रधान**- श्री भारत भूषण आर्य, **मन्त्री**- प्रवीण मदान, **कोषाध्यक्ष**- श्री शिवदत्त आर्य को चुना गया।

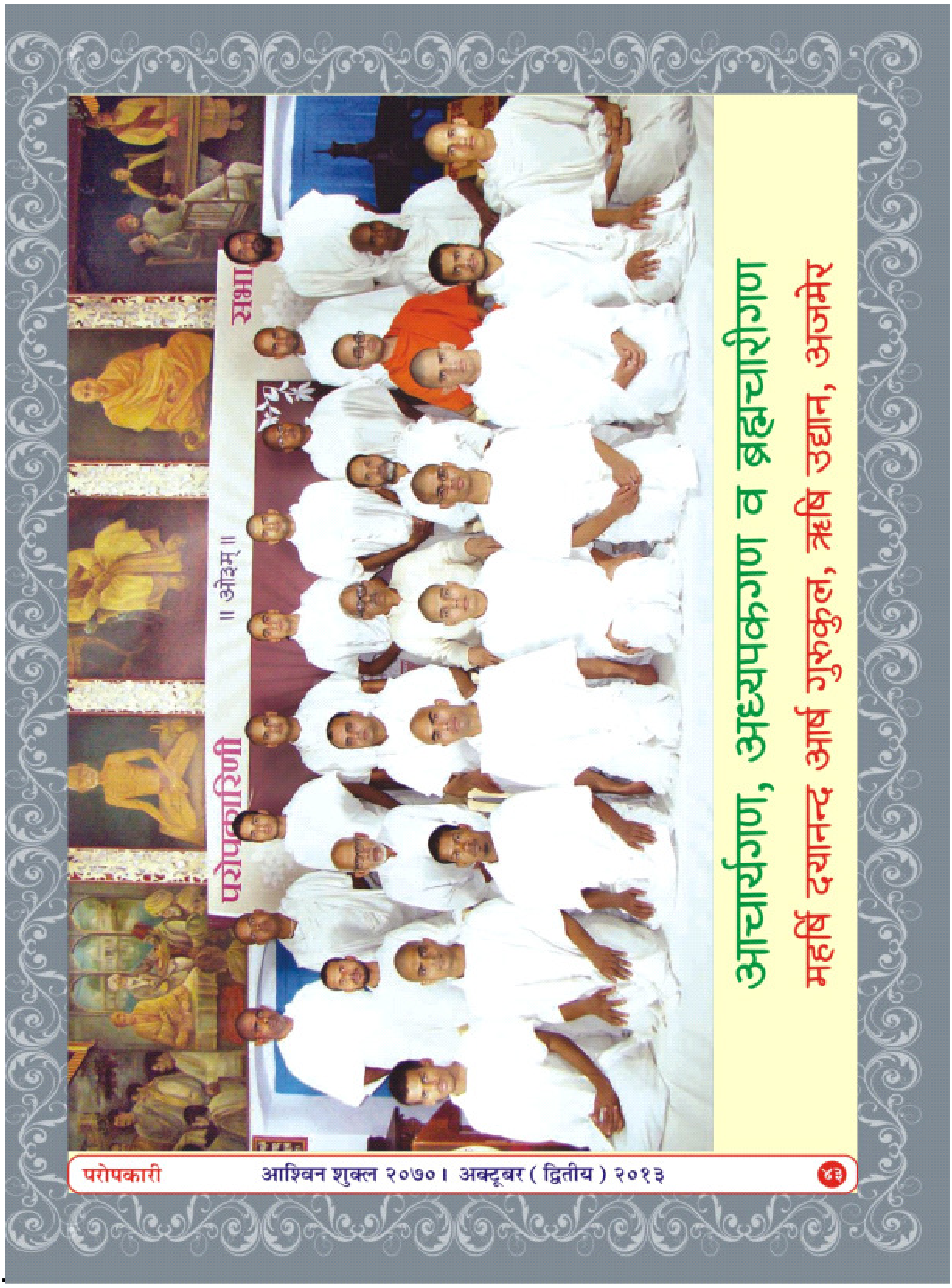
॥ ओ३म् ॥
परोपकारिणी सभा
आचार्यगण, अध्यापकगण व ब्रह्मचारीगण
महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर
परोपकारी
आश्विन शुक्ल २०७०। अक्टूबर (द्वितीय) २०१३
४३

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक　　प्रेषण : १५ अक्टूबर , २०१३　　RNI. NO. ३९५९/५९

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में

१३० वाँ ऋषि बलिदान समारोह

सभी आर्यजनों को **सादर आमन्त्रण** है।

विशेष-आकर्षण : ऋग्वेद पारायण यज्ञ, वेदगोष्ठी, चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता, विद्वानों का सम्मान

इस अवसर पर महर्षि दयानन्द को हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करें और महर्षि के स्वप्न को साकार करें।

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१

४४

डाक टिकट